लफ्टंट पिगसन की डायरी

बेढब बनारसी हिन्दी के चोटी के व्यंग्यकारों में प्रमुख माने जाते हैं, और 'लफ्टंट पिगसन की डायरी' उनकी सर्वोत्तम रचना है। हास्य और व्यंग्य से भरपूर इस अद्वितीय उपन्यास का यह सम्पूर्ण पॉकेट संस्करण है। देश की हर चीज़ को एक उधार ली हुई विदेशी नज़र से देखनेवालों का बखिया उधेड़ने के साथ ही लेखक ने हमारे जीवन के बनावटी-पन पर भी बड़ी करारी चोट की है। लफ्टंट पिगसन के मज़ेदार अनुभवों का यह व्यंग्यपूर्ण चित्रण अपनी मिसाल आप है। अत्यन्त रोचक पुस्तक !

लफ्टंट पिगसन की डायरी

[सात-आठ दिन हुए गुदड़ी बाजार की ओर चला गया। वहाँ एक मोटी, जिल्दबंधी कापी एक दुकान पर मिली। दीमकों ने इसका जलपान भी किया था। देखने पर एक डायरी निकली। लेफ्टिनेंट पिगसन सन् १९२१ में भारत में आए थे। यह डायरी दो साल की है। अन्त के कुछ पृष्ठ नहीं हैं। डायरी कितनी मनोरंजक है, पढ़ने से पता चलेगा। —बेढब बनारसी]

बम्बई का होटल

परसों तीन बजे मेरा जहाज बम्बई पहुंचा। जहाज से उतरकर एक टैक्सी पर मैं होटल पहुंचा। मेरे एक मित्र ने यहीं एक कमरा ठीक कर दिया था। कानपुर जाने के पहले मैंने बम्बई देख लेना उचित समझा। जिस होटल में ठहरा हूं उसके जितने ब्वॉय हैं, सब बड़े लम्बे-लम्बे कोट पहने हैं। जान पड़ता है यहां कपड़ा बहुत सस्ता है और उनका पतलून पाव से चिपका हुआ रहता है, शायद इसलिए कि छिपकली या चूहे भीतर घुस न आएं क्योंकि जिस कमरे में मैं सोता हूं उसकी छत पर छिपकलियां कुश्ती लड़ा करती हैं। जिस दिन यहा आया उसके दूसरे दिन सवेरे चाय पी रहा था। दो छिपकलियां नेपोलियन और वैलिंगटन की भांति लड़ने लगीं; और एक पट् से मेरी मेज पर गिरी। मैंने मैनेजर को उसी दम बुलाया और शिकायत की। उसने कुछ कहने के पहले मुझे बधाई दी कि चाय में नहीं गिरी। और ठीक भी है। यदि वह चाय में गिरती तो उसे कौन रोक सकता था? इतना मैं कह सकता हूं—छिपकली में समझ थी। गिरने के बाद उसने मेरी ओर देखा। अंग्रेजों का भय भारतवर्ष के मनुष्यों में ही नहीं, भारत की छिपकली भी अंग्रे-

लफ्टंट पिगसन की डायरी

[सात-आठ दिन हुए गुदड़ी बाजार की ओर चला गया था। वहां एक मोटी, जिल्दबंधी कापी एक दुकान पर मिली। दीमकों ने उसका जलपान भी किया था। देखने पर एक डायरी निकली। लेफ्टिनेंट पिगसन सन् १६२१ में भारत में आए थे। यह डायरी दो साल की है। अन्त के कुछ पृष्ठ नहीं हैं। डायरी कितनी मनोरंजक है, पढ़ने से पता चलेगा। —बेढब बनारसी]

बम्बई का होटल

परसों तीन बजे मेरा जहाज बम्बई पहुंचा। जहाज से उतरकर एक टैक्सी पर मैं होटल पहुंचा। मेरे एक मित्र ने यहीं एक कमरा ठीक कर दिया था। कानपुर जाने के पहले मैंने बम्बई देख लेना उचित समझा। जिस होटल में ठहरा हूं उसके जितने ब्वॉय हैं, सब बड़े लम्बे-लम्बे कोट पहने हैं। जान पड़ता है यहा कपड़ा बहुत सस्ता है और उनका पतलून पाव से चिपका हुआ रहता है, शायद इसलिए कि छिपकली या चूहे भीतर घुस न जाएं क्योंकि जिस कमरे में मैं सोता हूं उसकी छत पर छिपकलियां कुश्ती लड़ा करती हैं। जिस दिन यहा आया उसके दूसरे दिन सवेरे चाय पी रहा था। दो छिपकलियां नेपोलियन और वेलिंगटन की भांति लड़ने लगी; और एक पट् से मेरी मेज पर गिरी। मैंने मैनेजर को उसी दम बुलाया और शिकायत की। उसने कुछ कहने के पहले मुझे बधाई दी कि चाय मे नहीं गिरी। और ठीक भी है। यदि वह चाय मे गिरती तो उसे कौन रोक सकता था? इतना मैं कह सकता हूं—छिपकली भे समझ थी। गिरने के बाद उसने मेरी ओर देखा। अंग्रेजों का भय भारतवर्ष के मनुष्यों मे ही नहीं, भारत की छिपकली भी अ

करती है। मुझे देखते ही भागी। मक्खन और टोस्ट रखा था। उस ओर देखने का भी साहस नहीं हुआ। अब मुझे मालूम हुआ कि अंग्रेज लोग भारत पर कैसे शासन कर पाते हैं।

मैंने मैनेजर से कहा कि मुझे दूसरा कमरा दीजिए। मैनेजर ने कहा कि बदल देने में कोई हर्ज नहीं, परन्तु लोग क्या कहेंगे कि एक सैनिक अफसर छिपकली के भय से कमरा छोड़कर भाग रहा है। यह भारतवर्ष है। यहां तो आपको अजगर और कोबरा और गेहुअन और करइत पग-पग पर मिलेंगे। प्रसन्नता की बात है कि आपका जीवन छिपकली के संग्राम से आरम्भ हुआ।

मैनेजर सेना से अवकाश प्राप्त कर चुका था। वह कई बड़ी लड़ाइयां लड़ चुका था। उसका भारतवर्ष में बड़ा अनुभव था, इसलिए मुझे चुप रह जाना पड़ा। मैं चाय पीकर बम्बई घूमने निकला। मेरे साथ एक गाइड था। उसकी अंग्रेजी शेक्सपियर से भी अच्छी थी। मैंने लड़कपन में स्कूल में शेक्सपियर का एक नाटक पढ़ा था। उससे भी सुन्दर अंग्रेजी हमारे गाइड की थी। बिना क्रिया के वाक्य बोलता था, जो बहुत सुन्दर लगते थे। उसने अंग्रेजों की बड़ी तारीफ की। अंग्रेजों से भारतवासी बहुत प्रसन्न हैं।

बम्बई नगर में कोई विशेष बात मैंने नहीं देखी। हां, यहां स्त्रियों को सड़क पर आते-जाते देखा। लंदन में मेरे एक मित्र ने, जो भारत से लौटा था, कहा कि भारत में स्त्रियां कमरों में बन्द रहती हैं और त्यौहारों के दिन कमरे से बाहर निकलती हैं। परन्तु यहां मैंने दूसरी ही बात देखी। स्त्रियां उसी प्रकार दूकानों पर सौदा खरीदती हैं जैसे लंदन में। हां, एक नई बात यहां की स्त्रियों में मैंने देखी। यहां स्त्रियां स्कर्ट और जैकेट नहीं पहनतीं। रंग-बिरंगे बिना सिले कपड़ों को अपने शरीर पर लपेटे रहती हैं। वह किस प्रकार यह कपड़ा लपेटती हैं, मैं कह नहीं सकता, परन्तु देखने में बहुत आकर्षक जान पड़ता है। स्कर्ट इन कपड़ों के भीतर होता है।

मैं कार से उतरकर मैरीन ड्राइव पर टहल रहा था। चार स्त्रियां प्रत्यक्ष जा रही थीं। चारों के कपड़े चार रंग के थे। मुझे उनका

नाथा बहुत भला [illegible] को क्या [illegible]ते है?' उसने [illegible]सारी'।

मुझे दुख हुआ [illegible]ने [illegible]—[illegible] नहीं [illegible], [illegible]लिए [illegible]दि शिष्टता के [illegible]परीत [illegible] [illegible]एगा [illegible] उसने [illegible]हा—'ऐसी तो [illegible] बात नहीं है [illegible] [illegible] क्यों [illegible]कट किया। गाइड ने [illegible]—[illegible] इस पहरावे [illegible]ा नाम सारी (साड़ी) है।'

मैंने गाइड से एक सारी खरीदने की इच्छा प्रकट की। बात यह [illegible]ी कि मैं एक फोटो ऐसी लेना चाहता था जिसमें एक स्त्री सारी पहने [illegible]ो। ऐसी किसी स्त्री का फोटो मैं कैसे लेता; इसलिए मैंने सोचा [illegible]के एक खरीदकर किसीको पहनाकर उसकी फोटो ले लूगा। गाइड [illegible]मुझे एक कपड़े की दूकान पर ले गया। लंदन की दूकान से किसी भी अवस्था में वह दूकान कम नहीं थी।

एक सारी साठ रुपये में मुझे मिली। कभी-कभी इंगलैंड में मैं सुना करता था कि हिन्दुस्तान के लोग गरीब हैं। यद्यपि अधिकांश लोग यही कहते थे कि यह गप है। हिन्दुस्तान के लोग बहुत धनी हैं और यहां के धन का इसलिए पता नहीं लगता क्योंकि यह अपना बैंक धरती के नीचे बनाते हैं। जहां स्त्रियां इतने महंगे कपड़े पहनती हैं वह देश कैसे गरीब हो सकता है?

दूकान पर एक और बात हुई। मेरे जाते ही सब लोगों ने और ग्राहकों को छोड़ दिया और मेरी ही ओर आकर्षित हुए। सम्भवतः मेरा रंग इसके लिए जिम्मेदार था। उस समय ऐसा जान पड़ा कि अकेला मैं ही एक ग्राहक हूं। जो ग्राहक और थे, वह भी मेरी ओर देखते थे। मैं अपने को बहुत भाग्यशाली समझता हूं कि इस देश में मेरा इतना आदर हो रहा है। लंदन की सड़कों पर मैं प्रति दिन घण्टों घूमता था, पर मेरी ओर किसीने ताका भी नहीं। और यहां लखपती दूकानदार मेरे लिए खड़े हो गए। मैंने तो समझा कि मेरा इतना आदर हो रहा है कि शायद मुझे एक सारी मुफ्त में मिल जाए। परन्तु ऐसा तो नहीं हुआ।

लगती है। मुझे देखते ही भागी। मक्खन और टोस्ट रखा था। उस ओर देखने का भी साहस नहीं हुआ। अब मुझे मालूम हुआ कि अंग्रेज लोग भारत पर कैसे शासन कर पाते हैं।

मैंने मैनेजर से कहा कि मुझे दूसरा कमरा दीजिए। मैनेजर ने कहा कि बदलने में [illegible] हर्ज नहीं, परन्तु लोग क्या कहेंगे कि एक सैनिक अफसर छिपकली के भय से कमरा छोड़कर भाग रहा है। यह भारतवर्ष है। यहां तो पागलों अजगर और कोबरा और गेहुअन और करइत पग-पग पर मिलेंगे। प्रसन्नता की बात है कि भारत का जीवन छिपकली के संग्राम से प्रारम्भ हुआ।

मैनेजर सेना से अवकाश प्राप्त कर चुका था। वह कई बड़ी लड़ाइयां लड़ चुका था। उसका भारतवर्ष में बड़ा अनुभव था, इसलिए मुझे चुप रह जाना पड़ा। मैं चाय पीकर बम्बई घूमने निकला। मेरे साथ एक गाइड था। उसकी अंग्रेजी शेक्सपियर से भी अच्छी थी। मैंने लड़कपन में स्कूल में शेक्सपियर का एक नाटक पढ़ा था। उससे भी सुन्दर अंग्रेजी हमारे गाइड की थी। बिना क्रिया के वाक्य बोलता था, जो बहुत सुन्दर लगते थे। उसने अंग्रेजों की बड़ी तारीफ की। अंग्रेजों से भारतवासी बहुत प्रसन्न हैं।

बम्बई नगर में कोई विशेष बात मैंने नहीं देखी। हां, यहां स्त्रियों को सड़क पर आते-जाते देखा। लंदन में मेरे एक मित्र ने, जो भारत से लौटा था, कहा कि भारत में स्त्रियां कमरों में बन्द रहती हैं और त्योहारों के दिन कमरे से बाहर निकलती हैं। परन्तु यहां मैंने दूसरी ही बात देखी। स्त्रियां उसी प्रकार दूकानों पर सौदा खरीदती हैं जैसे लंदन में। हां, एक नई बात यहां की स्त्रियों में मैंने देखी। यहां स्त्रियां स्कर्ट और जैकेट नहीं पहनतीं। रंग-बिरंगे बिना सिले कपड़ों को अपने शरीर पर लपेटे रहती हैं। वह किस प्रकार यह कपड़ा लपेटती हैं, मैं कह नहीं सकता, परन्तु देखने में बहुत आकर्षक जान पड़ता है। स्कर्ट इन कपड़ों के भीतर होता है।

मैं कार से उतरकर मैरीन ड्राइव पर टहल रहा था। चार स्त्रियां एक साथ जा रही थीं। चारों के कपड़े चार रंग के थे। मुझे उनका

पहनावा बहुत भला [illegible] 'इस [illegible] को क्या कहते हैं?' उसने कहा—'सारी'।

मुझे दुःख हुआ [illegible]ने कहा—'[illegible]ति नहीं [illegible], [illegible]लिए यदि शिष्टता के [illegible]परीत कोई [illegible] जाएगा [illegible]। उसने कहा—'ऐसी तो को[illegible] बात नहीं है। [illegible] खेद क्यों प्रकट किया। गाइड ने [illegible]—'[illegible]। इस पहनावे का नाम सारी (साड़ी) है।'

मैंने गाइड से एक सारी खरीदने की इच्छा प्रकट की। बात यह थी कि मैं एक फोटो ऐसी लेना चाहता था जिसमें एक स्त्री सारी पहने हो। ऐसी किसी स्त्री का फोटो मैं कैसे लेता; इसलिए मैंने सोचा कि एक खरीदकर किसीको पहनाकर उसकी फोटो ले लूगा। गाइड मुझे एक कपड़े की दूकान पर ले गया। लंदन की दूकान से किसी भी अवस्था में वह दूकान कम नहीं थी।

एक सारी साठ रुपये में मुझे मिली। कभी-कभी इगलैंड में मैं सुना करता था कि हिन्दुस्तान के लोग गरीब हैं। यद्यपि अधिकांश लोग यही कहते थे कि यह धन है। हिन्दुस्तान के लोग बहुत धनी हैं और यहां के धन का इसलिए पता नहीं लगता क्योंकि यह अपना बैंक धरती के नीचे बनाते हैं। जहां स्त्रियां इतने महगे कपड़े पहनती हैं वह देश कैसे गरीब हो सकता है?

दूकान पर एक और बात हुई। मेरे जाते ही सब लोगों ने और ग्राहकों को छोड़ दिया और मेरी ही ओर आकर्षित हुए। संभवतः मेरा रंग इसके लिए जिम्मेदार था। उस समय ऐसा जान पड़ा कि अकेला मैं ही एक ग्राहक हू। जो ग्राहक और थे, वह भी मेरी ओर देखते थे। मैं अपने को बहुत भाग्यशाली समझता हूं कि इस देश में मेरा इतना आदर हो रहा है। लंदन की सड़कों पर मैं प्रति दिन घण्टों घूमता था, पर मेरी ओर किसीने ताका भी नहीं। और यहां लखपती दूकानदार मेरे लिए खड़े हो गए। मैंने तो समझा कि मेरा इतना आदर हो रहा है कि शायद मुझे एक सारी मुफ्त में मिल जाए। परन्तु ऐसा तो नहीं हुआ।

साड़ी लेकर जब मैं दूकान में बैठी एक सुन्दरी से मैंने कहा कि साड़ी आप पहन लीजिए। मैं एक चित्र खींचना चाहता हूं। परन्तु उसने कहा कि मैं ऐसे तस्वीर नहीं खिंचवा सकती। तब मैंने हठ करके कहा कि अच्छा, मैं साड़ी पहनता हूं और आप तस्वीर खींच लीजिए। फोटो बहुत शानदार थी, क्योंकि साड़ी मुझे बहुत पसन्द आई और साड़ी पहने हुए औरत का चित्र मैं जिन लोगों को भेजना चाहता था। मैं उनको भेज सकता हूं।

मैं तो साड़ी पहनना जानता नहीं था। दूकान ने मुझे साड़ी पहनाई और मेरा चित्र खींचा गया। मगर फोटो खराब हो गया क्योंकि साड़ी कुछ ऊपर उठ गई और दोनों पांवों का पायजामा दिखाई देने लगा।

रेलगाड़ी में

तीन दिनों तक बम्बई रहने के बाद मैं नागपुर के लिए रवाना हुआ। बम्बई में कोई विशेष बात नहीं हुई। मैं जिस गाड़ी से चला उसका नाम बम्बई मेल है। काफ़ी तेज़ है। रात का तो मुझे पता नहीं, परन्तु दिन में इतनी धूल गाड़ी में आती है कि शायद स्त्रियों को पाउडर लगाने की आवश्यकता न पड़े।

मुझे हल्की-हल्की नींद आ रही थी कि गाड़ी एकाएक खड़ी हो गई और ज़ोरों का शोर हुआ। जान पड़ा कि कहीं लड़ाई हो गई है। यद्यपि गोली या तोप की गड़गड़ाहट नहीं सुनाई पड़ी, परन्तु कोलाहल ऐसा ही था। मैं अपने डब्बे के फाटक पर आ गया। देखा कि मुसाफिर लोग इस ज़ोर से डब्बे की ओर चले जैसे क्षय के कीटाणु कमज़ोर फेफड़ों पर आक्रमण करते हैं।

ऐसे समय मुझे एक बात देखने में आई जिससे मेरे रोंगटे खड़े हो गए। मैंने कभी भूत पर विश्वास नहीं किया। अनेक कहानियां

भूतों की पढ़ी हैं, परन्तु उन्हें कभी मैंने सच नहीं समझा।

सवेरे का समय, कोई आठ बज रहे होंगे। दिन काफी चढ़ चुका था। भीड़ भी स्टेशन पर बहुत थी। मैं क्या देखता हूं कि उसी भीड़ में से एक आदमी के बराबर कपड़े की मूर्ति प्लेटफार्म पर घूम रही है। न हाथ है न पांव। भारत के सम्बन्ध में अनेक कहानियां सुन रखी थीं। लन्दन की सड़क पर यदि ऐसी घटना हो तो तहलका मच जाए। परन्तु यहां तो किसीने ध्यान ही नहीं दिया। सम्भव है कि यह भूत मुझे ही दिखाई पड़ा हो और लोग उसे न देख रहे हों।

परन्तु उस समय की मेरी घबराहट का कोई अनुमान नहीं कर सकता जब मैंने देखा कि भूत मेरी ही ओर आ रहा है। फिर देखता हूं कि एक आदमी भी उसके साथ आगे-आगे है। उस आदमी की बहुत लम्बी दाढ़ी थी। अवश्य ही वह जादूगर था और भूत को लिए टहल रहा था। परन्तु उसका साहस तो देखिए कि इतनी भीड़ में दिन-दहाड़े भूत को लिए घूम रहा है!

देखते-देखते वह जादूगर आगे-आगे, और भूत पीछे-पीछे मेरे डब्बे के दरवाज़े के आगे पहुंच गए। मेरे रोंगटे खड़े हो गए। पसीने से कमीज़ भीग गई, पाव के दोनों घुटने आपस में टकराने लगे। मैंने आंखें मूंद लीं, मुंह गाड़ी में भीतर की ओर कर लिया और अन्दर से हैंडिल ज़ोर से पकड़कर दरवाज़े से सटकर खड़ा हो गया। एक मिनट भी न बीता होगा कि बाहर से किसीने दरवाज़े पर धक्का दिया। मेरे हृदय की गति रुकने लगी। आंख खोलने का साहस न हुआ। किसी दैवी शक्ति की प्रेरणा से हैंडिल को अधिक ज़ोरों से पकड़ लिया।

दरवाज़े पर फिर एक धक्का हुआ और इस बार अंग्रेज़ी में किसीने कहा—'कृपा कर हट जाइए और दरवाज़ा खोलिए।' पता नहीं अंग्रेज़ी में जादूगर ने कहा कि भूत ने। जान पड़ता है कि भारत में अंग्रेज़ी खूब प्रचलित है। जादूगर यदि बोला था तो उसकी भाषा बहुत शुद्ध थी। जादूगर ही था। उसे क्या! कोई भी भाषा बोल सकता था। परन्तु मैं दरवाज़ा खोलकर अपनी जान क्यों आफ़त में डालता?

इतने में गाड़ी ने सीटी दी। मैंने सोचा, जान बची। परन्तु अन्

और उनके साथ जादूगर। जो न कर डाले।

फिर आवाज आई—'प्लीज' और जोर से दरवाजे पर उसने धक्का दिया। और उसने कुछ कहा, पता नहीं कोई मंत्र पढ़ा अथवा भूत से कुछ बात की। उस भूत ने पटरी पर पाव रखा। मैं चिल्लाकर अपनी सीट पर गिर गया।

मैं कितनी देर बेहोश रहा, कह नहीं सकता। सम्भवतः बीस मिनट तक रहा हूंगा। गाड़ी सर्राटे के साथ चली जा रही थी। मुझे होश आ गया परन्तु आंख खोलने का साहस नहीं होता था। पर आखिर आंख खुल गई। उस समय उस जादूगर की करामात देखकर मेरे आश्चर्य का ठिकाना न रहा। उस भूत को उसने स्त्री बना दिया। कपड़ा तो चारों ओर वैसा ही था। केवल चेहरा मुझे दिखाई दिया। परन्तु ज्योंही मेरी और उसकी आंखें चार हुईं; उसने तुरत अपना मुंह ढक लिया। केवल दो मिनट मैंने उसका चेहरा देखा। सचमुच वह चुड़ैल थी, जिसे जान पड़ता है इस जादूगर ने बांध रखा था।

मुंह का रंग टेम्स के जल के समान काला था। उसपर चेचक के चिह्न थे। मगर चेहरे की कटान अच्छी थी। मेरी ओर उसने देखा, मैं सहम गया, परन्तु तुरन्त उसने मुंह फिर से ढक लिया।

मैं सोचने लगा कि यह कैसा जादूगर है? इसे क्यों लिए जा रहा है? इसने यदि इसे बनाया है तो कपड़े से ढकने की क्या आवश्यकता थी? मैं अपने स्थान पर बैठ गया। इधर-उधर देखकर एक उपन्यास निकाला, पर पढ़ने में जी नहीं लगा।

थोड़ी देर बाद उसीने मुझसे पूछा—'आप कहां जाएंगे?' मैंने कहा—'मैं कानपुर जाऊंगा।' मैं चुप रहा। मुझे पूछने भय लगता था। कहीं मुझे कुछ बना दे! सोचते-सोचते मुझमें कुछ साहस आया। मेरा पिस्तौल मेरे बक्स में था। वह गार्ड के डिब्बे में था। नहीं तो कोई कठिनाई न होती। फिर भी मैंने पूछने की हिम्मत की। पूछा—'आप कहां जाएंगे?'

'लखनऊ।'

'यह आपके साथ क्या है?'

'क्या मतलब आपका ?'

मैं कुछ घबरा-सा गया। बोला—'क्षमा कीजिएगा। मेरा मतलब है, वह आपके साथ कौन है?'

मेरा प्रश्न सुनकर जान पड़ता था वह कुछ नाराज-सा हुआ। परन्तु वह बिगड़ा नहीं। गम्भीर मुद्रा में उसने उत्तर दिया—'यह मेरी स्त्री है।'

मुझे सुनकर विश्वास नहीं हुआ। स्त्री है तो इस भांति चोगे में लपेटने की क्या आवश्यकता थी? मुझे जानने की बड़ी उत्सुकता हुई। मैं अधिक जानना चाहता था। मैंने उसके बारे में पूछा तो पता चला कि वह लखनऊ में सरकारी नौकर—डिप्टी कलक्टर है। मेरी बार-बार इच्छा होती थी कि पूछूं—आपने अपनी स्त्री को इस प्रकार क्यों रखा? एक कारण यह हो सकता था कि उसका चेहरा सुन्दर और अच्छा नहीं था और वह सरकारी नौकर अच्छे पद पर थे। लोग इनकी स्त्री को इस प्रकार देखेंगे तो इन्हें लज्जित होना पड़ेगा।

नशे की झोंक

गाड़ी अपनी गति से चली जा रही थी। डिप्टी से धीरे-धीरे बात भी आरम्भ हो गई और उसी बात में पता चला कि उसके धर्म में लिखा है कि स्त्रियां इसी प्रकार कपड़ों से अपना शरीर ढककर बाहर निकला करें। ऐसे धर्म के सम्बन्ध में मुझे और जानकारी प्राप्त करने की आकांक्षा हुई। और उनसे और भी बातें हुईं। धीरे-धीरे उनसे एक प्रकार की मित्रता भी हो गई।

थोड़ी देर बाद एक स्टेशन आया और उन्हें प्यास लगी। उन्होंने किसीको पुकारा और स्वयं एक पुरानी केटली लेकर पानी के लिए दरवाजे पर खड़े हो गए। एक सरकारी नौकर वेतन तो काफी

परन्तु कहनी चाहिए।'

मैंने पूछा—'मेरी समझ में कुछ ठीक तो नहीं आया। यह हिन्दुस्तानी क्या है ?' उन्होंने कहा—'यह हिन्दी पर उर्दू की कलम लगाई गई है जो अभी पकी नहीं है, अंकुरित हुई है।'

मैंने पूछा—'तो आपकी क्या राय है ? मैं कौन-सी भाषा अभ्यास करूँ और कौन बढ़ाऊँ ?'

कर्नल साहब ने कहा—'तुम उर्दू सीखो। यहाँ जो और अफसरों को पढ़ाता है, वही तुम्हें भी पढ़ा देगा।'

सप्ताह में तीन दिन के लिए पचीस रुपये मासिक पर पढ़ने के लिए कर्नल साहब ने अध्यापक ठीक कर दिया। कर्नल साहब ने मुझे यह भी बता दिया कि यहाँ पर अध्यापकों का किस भाँति सम्मान किया जाता है। कैसे उनका आदर किया जाता है। उन्होंने कहा कि उन्हें 'मौलवी साहब' कहा जाता है।

मैं कानपुर के सम्बन्ध में कुछ लिखना चाहता था, किन्तु पहले दिन की मौलवी साहब से बातचीत हुई वह मनोरंजक है। इसलिए उसे पहले लिख डालता हूँ।

सोमवार का दिन था। सन्ध्या समय मौलवी साहब आए। मैं हाकी मैच खेलकर लौटा था और सोडा-वाटर पी रहा था। मौलवी साहब बहुत लम्बा कोट, वही रेल के डिप्टी साहब की भाँति पहने हुए थे। दाढ़ी भी वैसी ही थी। जान पड़ता है कि कोट जितना लम्बा होता है, उसीके अनुपात में दाढ़ी भी लम्बी रखनी पड़ती है। दाढ़ी का रंग लाल था जैसे कनस्टर पर लगा हुआ मोरचा। वह जब आए तब मुँह में कुछ चबा रहे थे। जिससे उनके दांत, जीभ और ओंठ लाल हो गये थे। उनका पतलून विचित्र ढंग का था जो उनके पतले पाँव के बाहर झूल रहा था। पाँव में मोज़े नहीं थे और जूता न पम्प था, न आक्सफोर्ड; विचित्र ढंग का था। टोपी लम्बी और लाल थी और टोपी के ऊपर एक काली पूंछ भी थी।

उन्हें देखते ही मैं खड़ा हो गया और कर्नल साहब की बात भूल गया और कह बैठा—'मौलवी साहब, गुड इवनिंग' पर उन्होंने बुरा नहीं

मैंने कहा—'क्या वहां कोई युद्ध हुआ था ?' कर्नल साहब ने कहा—'नहीं, उसमें बहुत-से अंग्रेज काटकर फेंक दिए गए थे।' मैंने पूछा—'क्यों ?'

कर्नल ने कहा—'बहुत-से हिन्दोस्तानी अंग्रेजी राज्य के विरो मे लड़ने को तैयार हो गए थे। उन्हीं का यह काम था।'

मैंने कहा—'लड़ाई में तो यह होता ही है फिर उसे एक मेमोरिय का स्वरूप देने की क्या आवश्यकता थी ?' कर्नल ने कुछ अप्रसन्नत से कहा—'ऐसे विचारों को प्रकट करने से तुम निकाल दिए जाओगे हम लोग भारत में शासन करने आए हैं। किसी प्रकार का उदार विचा प्रकट करने से भारतवासी उद्दण्ड हो जाएंगे। फिर हम यहां शास नहीं कर पाएंगे और भारत में हमारा शासन नहीं होगा तो यह सेना नई रहेगी। फिर हम-तुम कहां रहेंगे ? इसलिए इतनी बातें याद रखना भारतवासियों से कभी मिलना-जुलना मत। किसी प्रकार का उदा विचार प्रकट मत करना।'

मुझे यह बातें अच्छी नहीं लगी; परन्तु मैं अपने अफसर के विरुद्ध कुछ कहना नहीं चाहता था। मैंने तो भारत के बारे में सभी कुछ जानने का निश्चय किया था। फिर भी मैंने इसपर विवाद उठाना ठीक नहीं समझा। अच्छा मेमोरियल देख आऊं, फिर उधर से सिनेमा देखता आऊंगा।

आज पहले-पहल नगर देखने का अवसर मिला। पहले सीधे मेमोरियल कुएं की ओर गया। कुआ तो दिखाई नहीं दिया। एक वस्तु घिरी हुई और बन्द दिखाई दी और उसपर सारी घटना लिखी हुई थी। मेरी समझ में नहीं आया कि इसकी क्या आवश्यकता थी। समुद्र में इतने जहाज डूब गए, वहां कोई मेमोरियल क्यों नहीं बना ?

मैं इतिहास के बारे में कुछ नहीं जानता। इसलिए इस कुएंवाली घटना पर कुछ नहीं लिख सकता। पर कोई विशेष मनोरंजन यहां नहीं हुआ। तांगेवाले से मैंने शहर में चलने के लिए कहा। कानपुर निर्धन नगर नहीं है। मुझसे गलत बताया गया कि यहां धन नहीं है। एक बात अवश्य यहां देखने में आई, एक सड़क पर मैंने देखा कि यहां

मोची बहुत हैं और चमड़े की दुकानें चारों ओर हैं। मुझे यदि नामकरण करना होता तो इस नगर का नाम कानपुर न रखकर मोचीनगर रखता। पता नहीं यहां के सभी नगरों में इतने मोची हैं या नहीं? कम से कम बम्बई में मुझे इतने मोची नहीं मिले। मौलवी साहब से पूछूंगा कि इतने मोची कानपुर में ही क्यों एकत्र कर दिए गए हैं?

यों ही कौतूहलवश एक दुकान के भीतर मैं चला गया कि देखूं किस प्रकार का सामान यह लोग बनाते हैं। वहां कुछ तो सूटकेस इत्यादि थे; इनमें कोई विचित्रता नहीं थी। कुछ जूते बिल्कुल विलायती जूतों की भांति थे। बड़ी अच्छी नकल इन लोगों ने कर रखी थी। कुछ रोमन और पुरानी चप्पलें भी थीं। इनके अतिरिक्त कुछ और जूते थे जो ठीक भारतीय जूते कहे जा सकते हैं। इनमें कुछ ऐसे थे जो ऊपर बढ़िया मखमल के बने थे जिनपर बड़ी सुन्दरता से रेशम अथवा सोने का काम किया हुआ था।

इन जूतों में फीते न थे, न बांधने का तसमा था। जान पड़ता है वह पम्प जूतों को देखकर उनका भारतीयकरण किया गया है। सबसे अच्छी बात इनमें यह है कि यदि झगड़ा हो तो आसानी से यह उतारे जा सकते हैं। फीता खोलने की देर नहीं लग सकती। हल्के भी होते हैं जिससे स्त्रियां और बालिकाएं भी इसे सुगमता से चला सकती हैं। एक बात और। इतने भारी भी यह नहीं होते कि चोट अधिक लग सके। इसलिए यदि आवश्यकता पड़े तो यह काम भी इससे लिया जा सकता है और विशेष कष्ट भी इससे नहीं होगा। विलायत में ऐसे जूतों की बहुत आवश्यकता है। पार्लियामेंट में विवाद के अवसर पर जब कभी मार-पीट हो जाती है तब पहले तो जल्दी जूते खुलते नहीं और यदि खुलकर कहीं बैठ जाते हैं तो मरहम-पट्टी की आवश्यकता पड़ती है। घरेलू झगड़ों में कभी-कभी चोट-चपेट के कारण अदालत तक जाना पड़ता है। ऐसे ही जूते वहां रहें तो कितनी ही समस्याएं सुगमता से सुलझ जाएं। मैंने अपने नाप का एक जोड़ा तो खरीद लिया और एक जोड़ा और सुन्दर देखकर विलायत भेजने के लिए ले लिया। वहां मेरी मित्र मिस ब्लेट को बहुत पसन्द आएगा।

सन्ध्या हो चली थी, इसलिए मैंने तांगेवाले से एक अच्छे सिनेमा
में ले जाने के लिए कहा। उसने मुझे एक विशाल भवन के सामने ला
तांगा खड़ा कर दिया। तांगेवाले ने कहा—'फाइव रुपीज़'। मु
लोगों ने यहां बताया था कि हिन्दोस्तानी लोग प्रत्येक चीज़ का
दूना मांगते हैं। इसलिए मैंने ढाई रुपये उसके हवाले किए और
रुपये का एक टिकट खरीदा और सिनेमा हाल के भीतर प्रवेश किय

सिनेमा में

सिनेमा घर के भीतर प्रवेश करने पर मैं क्या देखता हूं कि एक
सफेद रंगवाला यहां नहीं है और दूसरी बात जो देखी उससे पता
कि सम्भवतः चुप रहने पर दफा १४४ लगी हुई है। जितने पुरु
वह बात कर रहे हैं, जितनी महिलाएं हैं वह बहस कर रही हैं,
जितने बच्चे हैं वह रो रहे हैं और जितने लड़के हैं वह लड़ रहे
चाय, सोडा, मूंगफली बेचनेवाले पैरों पर से चढ़ते हुए, और ज़ोर-
से चिल्लाते हुए चल रहे थे। साढ़े छ: का समय आरम्भ होने का
और सात बज रहे थे।

पहले मैंने समझा था कि अंग्रेजी सिनेमाघर होगा और कोई अं
खेल होगा; किन्तु तांगेवाले ने जहां मुझे पहुंचा दिया था वह हिन्दुस
सिनेमाघर था। हैंडबिल में अंग्रेजी में छपा था खेल का नाम 'तूफ
अभिनेताओं को तो मैं जानता नहीं था। चुपचाप बैठा। सोचा,
भला आदमी पास में बैठेगा तो उससे कुछ पूछूंगा। इतने में एक चाय
मेरे सामने भी आकर खड़ा हो गया। बोला—'साहब चाय?'
कुरते में एक ही आस्तीन थी, सामने का बटन कब से नहीं था, कह
सकता, और माथे पर से पसीने की बूंदें ओस के कण के समान
रही थीं। जितनी तेज़ उसकी आवाज़ थी उतनी ही बढ़िया यदि

भी होगी तब तो बात ही क्या !

इतना अवश्य था कि यदि मैं उनकी भाषा भी सीख लेता तो निश्चय ही कुचवालों की चाय के साथ भावनात्मक मनबहलाव के तरीके का भी प्यार मुझे मिल जाता। मैं अभी इस नवीन प्यार के लिए तैयार न था।

सवा सात बजे खेल आरम्भ हुआ। इस सिनेमा हाल की पहली विशेषता यह थी कि जब कोई गाना आरम्भ होता था तब पर्दे पर कोई न कोई चित्र भी गाने के साथ देता था। मेरी समझ में गाना तो आता नहीं था, परन्तु स्वर बड़ा मधुर था। सबसे सुन्दर वस्तु जो मुझे इस खेल में जान पड़ी वह नृत्य था। कभी-कभी नर्तकियाँ ऐसी सफाई से घूमती थीं जैसे उनकी कमरों में कमानी लगी हो और मशीन द्वारा घूम रही हों। इन नर्तकियों के कपड़े तो ऐसे मूल्यवान थे कि सम्भवतः विलायत की महारानी को महलों में भी कभी दिखाई न दिए होंगे।

मेरी समझ में खेल तो बहुत कम आया। यहां भारत में एक विचित्रता देखने में आई। खेल में एक दृश्य था कि एक आदमी बहुत सख्त बीमार था। डाक्टर आया, देखकर उसने कुछ चिन्ता-सी प्रकट की। उसके चले जाने के पश्चात् इसकी स्त्री अथवा प्रेमिका, जो भी रही हो, गाने लगी। पता नहीं डाक्टर ने उसे गाने के लिए कहा था। शायद वह रोग गाने से ही अच्छा होता हो।

भारत रहस्यपूर्ण देश है, इन्हीं बातों से पता चलता है कि इस खेल में एक घण्टे संवाद हुआ होगा तो एक घण्टे संगीत हुआ होगा। संगीत की कला कैसी थी मैं कह नहीं सकता। स्वर मधुर अवश्य थे।

एक दृश्य में एक व्यक्ति घोड़े पर सवार था। वह हिन्दुस्तानी धोती पहने था। शायद यहां घोड़े पर सवार होने के समय ब्रीचेज नहीं पहनी जाती। और घोड़े के दौड़ने के समय उसकी धोती खिसक-कर धीरे-धीरे कमर की ओर चली जा रही थी।

खेल की कथा के सम्बन्ध में मैं जानना चाहता था। इसलिए मैंने साहस करके बगल में बैठे एक सज्जन से कहा कि मैं यहां की भाषा नहीं जानता। मैं जानना चाहता हूं कि कथा क्या है। उन्होंने बड़ी

शालीनता से कथा का सारांश बताया। उस कथा के सहारे खेल समझने की चेष्टा करता रहा। यदि यह वास्तविक जीवन का चित्र है और साधारणतया लोगों का जीवन ऐसा ही होता है जैसा खेल में दिखाया गया है तो यही मानना पड़ेगा कि इस देश के माता-पिता बहुत ही क्रूर होते हैं। वह कभी अपने पुत्र तथा पुत्री को अपने मन के अनुसार विवाह नहीं करने देना चाहते। पसन्द वह स्वयं करते हैं और उनकी राय नहीं लेते। यदि हर घर में ऐसा होता है तब हर घर में सदा दुखान्तपूर्ण नाटक होता है। फिर आश्चर्य इस बात का है, इतने विवाह हो कैसे जाते हैं।

यदि प्रत्येक पुत्र व पुत्री पिता से विद्रोह करती है, जैसा कि नाटक में दिखाया गया, तो घरों में शान्ति कैसे रहती है? और यदि यह केवल कल्पना थी तब तो लेखक ने भारत के प्रति अन्याय किया।

परन्तु मैं इस विषय पर राय देने का अधिकारी नहीं हूं, क्योंकि सारा खेल मैं कल्पना के सहारे समझने की चेष्टा करता रहा।

जिस कुर्सी पर मैं बैठा था उसमें खटमलों का एक उपनिवेश था। सब कुर्सियों में था या नहीं मैं कह नहीं सकता। यदि सब कुर्सियों में था तो यहां के सिनेमा देखने वालों के संतोष की प्रशंसा करना आवश्यक है। मैं कह नहीं सकता कि यह पाले गए हैं कि अपने से कुर्सियों में आकर बस गए हैं। यह मैंने सुना है कि भारतवासी लोग कीट-पतंग, पशु-पक्षी के प्रति बड़ा स्नेह रखते हैं। ऐसी अवस्था में यदि यह पाले गए हों तो आश्चर्य नहीं।

जब बीच में अवकाश हुआ तब मैं बाहर निकल आया। देखता क्या हूं कि धीरे-धीरे मेरे चारों ओर लोग एकत्र हो रहे हैं। मैं समझ न पाया कि बात क्या है। अपने कपड़ों की ओर मैंने देखा कि कोई विचित्रता तो नहीं है। किसी ने मुझसे कुछ [illegible] भी नहीं। मैंने यों ही प्रश्न कर दिया—'क्या चाहिए?' कुछ लोग खिसक गए और दूसरे लोग अब कुछ दूर खड़े हो गए। वह मुझे [illegible] देख रहे थे।

यहां के लोगों ने संभवतः गोरे सैनिकों को नहीं देखा था, इसलिए बड़ी उत्सुकता से वह मुझे देख रहे थे। [illegible] सभी [illegible]

ज़ोर से 'हूं' कर दिया। उसी आवाज़ से सब लोगों ने भागना प्रारम्भ कर दिया। मुझे बड़ी हंसी आई और ज़ोर-ज़ोर से हंसने लगा। मेरी हंसी शायद बहुत पसंद आई इसलिए लोगों ने तालियां पीटीं। जैसे किसी व्याख्यान में बहुत सुन्दर बात कही गई हो। फिर घंटी बजी, परंतु मेरा मन खेल में लग नहीं रहा था, इसलिए बैरक में चला आया।

बाइसिकिल और बेयरा

मैं अब साधारण हिन्दुस्तानी समझ लेता हूं और छोटे-छोटे वाक्य बोल भी लेता हूं। हिन्दुस्तानी सीख लेने से एक लाभ यह हो गया कि नौकरों से काम लेना तो सरल हो गया, एक और बात है: मैं पहले नहीं जानता था कि यहां नौकरों को गाली देना आवश्यक है।

परसों मैंने बेयरा को मेसर्स 'लूटर्स एंड को०' के यहां कुछ सामान के लिए भेजा। वह तीन घण्टे के बाद लौटा। मैंने पूछा—'इस समय क्यों आए?' उसने कहा—'देर हो गई।' मैंने पूछा—'क्यों देर हो गई?' वह बोला—'बाइसिकिल टूट गई।' मैंने पूछा—'बाइसिकिल कैसे टूट गई?' वह बोला—'साहब—एक साहब मोटर चलाते थे। उन्होंने जान-बूझकर मेरी बाइसिकिल से लड़ा दी। मैंने बहुत हटाने की चेष्टा की, परन्तु जिस ओर मैं साइकिल ले जाता था उसी ओर वह मोटर लाते थे। मैंने समझा इनका मतलब यह है कि मैं चाहे जहां भी जाऊं—मुझे दबाने के लिए कसम खा ली है इन्होंने। इसलिए मैंने साइकिल छोड़ दी और अपनी जान बचा ली। साइकिल तो हुज़ूर, बन सकती है या नई आ सकती है। मैं मर जाता तो आपकी खिदमत कौन करता? बस, यही लालच था कि आपकी खिदमत कुछ दिन और करूं, नहीं तो ज़िंदगी से कोई और लगाव नहीं है। खुदा हुज़ूर को सलामत रखे, मैं बाल-बाल बच गया। साइकिल तो ज़रा-सी टूट गई।'

मैंने पूछा—'क्या टूटा है?' बोला—'ज़रा-सा पहिया टूट गया है।' 'देखू।' वह दो पहिये उठा लाया या यह कहना चाहिए कि वह वस्तुतः वह उठा लाया जो पहले पहिया था। उसमें एक इस समय षट्कोण के रूप में था और दूसरा मानो गोरखधंधे का कोई खेल हो। मैंने पूछा—'यह ज़रा-सा टूटा है?' वह बोला—'हुजूर, मैंने ऐसी बाइसिकिल देखी है जो मोटर से दबकर बिलकुल चकनाचूर हो गई है। जिसकी एक-एक तीली सौ-सौ सूई के टुकड़ों में बदल गई है। और हुजूर, देखिए, आपके लिए जो बोतलें ला रहा था वह सब सही-सलामत। खुदा की रहमत देखिए। खुदा आपपर बहुत मेहरबान है। आप बहुत जल्दी जनरल हो जाएंगे।'

बाइसिकिल सरकारी थी इसलिए उसकी सूचना कर्नल साहब को देनी आवश्यक थी। मैंने जाकर कर्नल साहब को सब हाल बताया। उन्होंने पूछा कि तुमने क्या किया। मैं बोला—'मैं क्या करता? मैं तो बाइसिकिल बनाना नहीं जानता।' कर्नल ने कहा—'यह नहीं, बेयरा को क्या किया?'

मैं तो जानता नहीं था कि क्या करना होता है। कर्नल ने कहा—'देखो, यदि तुम्हें यहां अपनी जान नहीं देनी है, तो दो बातें याद रखो। नौकरों को जब कुछ कहो तो गालियां देकर। और वह कुछ गलती करें तो दस-बीस गालियां दो। और अगर उससे भी बड़ी गलती करें तो ठोकर लगानी चाहिए। एक, दो या तीन। उस समय जितनी तुममें शक्ति हो उसके अनुसार।'

मैंने कहा—'मुझे तो गालियां आतीं नहीं। आप बताएं तो ज़रा मैं नोट कर लूं!' और मैंने पेंसिल और नोटबुक संभाली।

कर्नल शूमेकर ने कहा—'हां, इसका जानना बहुत आवश्यक है। लिख लो, देखो—आरम्भ करो 'पाजी' से; फिर कहो—गधा; फिर सूअर, और फिर सूअर का बच्चा। इसके बीच-बीच डैम, ब्लडी, इत्यादि कहने से रोब और [illegible] थोड़ी-सी गालियां हैं, मगर वह लफ्टंट के लिए नहीं। उन्हें कप्तान और कर्नल ही दे सकते हैं।'

मैंने दो दिनों में उन गालियों को याद [illegible] मैंने इन्हें रट लिया।

जब तक मैं यहां हूं, इसे अपने से अलग नहीं कर सकती और यदि यह इतने महत्व की वस्तु है तो इंगलैण्ड लौटने पर इसे इण्डिया आफिस को प्रदान कर दूंगी। यह इसी जगह रखने की वस्तु है।

इस विवाद से इतना लाभ मुझे हुआ कि भूख तेज हो गई और मैंने डयोढ़ा खाया। मछली तो मैंने तीन प्लेट खाई।

पिगसन का पदक

भोजन के बाद शराब का दौर चला। हाथ में शराब का गिलास था, और मुंह में हमारे यही जूता था। उसीकी बातचीत चल रही थी। मैं सपने में भी नहीं समझता था कि जूता इतनी महत्ता पा जाएगा। इंडिया आफिस में भेजने तक ही बात न रही। कैप्टन रोड ने कहा कि इसी ढंग के जूते यदि विलायत में बनवाए जाएं तो बड़ा अच्छा व्यवसाय चल सकता है। कर्नल साहब, आप पेन्शन लेने के बाद क्यों नहीं इसका रोजगार करने का प्रबन्ध करते? कर्नल साहब ने समझा कि हमारे नाम के कारण कैप्टन रोड हमारा उपहास कर रहे हैं। उन्होंने कहा कि हां, हम बनाएंगे पर चलेंगे तो आप ही के ऊपर।

इसपर जोरों का कहकहा लगा। कर्नल साहब की श्रीमती के तालू में शराब चढ़ गई और वह उठकर लगी कमरे में नाचने।

भोजनोपरांत हम लोग दूसरे कमरे में चले गए और वहां सिगार पीने लगे। वहां मिसेज शूमेकर नहीं थीं। लफ्टंट बफेलो ने मुझे एक ओर ले जाकर कहा—'कहो, कहां से यह जूता बनवाकर लाए? मुझे बना दो। मैं भी एक जोड़ा चाहता हूं।' मैंने पूछा—'क्या करोगे?' बोला—'व मिश्नर साहब की लड़की मिस बटर को तुमने देखा है?' मैंने कहा—'देखा है।' उसने कहा—'मेरी उससे बड़ी घनिष्ठता है। मैं एक जोड़ा उसे उपहार में देना चाहता हूं। परन्तु यदि मूल्य अधिक हुआ तब तो

कठिन है। क्योंकि इस महीने में तीन सौ रुपये का शराब का एक बिल चुकाना है। रुपये बचेंगे नहीं।'

मैंने कहा—'एक काम करो। सच्चे दाम का जूता तो उतने दामों में नहीं मिल सकता। हां, झूठे दाम का वैसा ही जूता, ठीक वैसा ही, मिल जाएगा। हां, कुछ दिनों में उसका रंग काला हो जाएगा।' जिस कम्पनी से मैंने जूते लिए थे, उस कम्पनी का नाम बता दिया।

एक बजे रात को मैं अपने बंगले पर लौटा। अपनी विजय पर बहुत प्रसन्न था। मैंने सपने में भी यह आशा नहीं की थी कि दो जूते इतनी सफलता प्रदान करेंगे। मुझे इस बात का तो विश्वास ही हो गया कि कर्नल साहब अवश्य ही मेरी प्रशंसा करेंगे। और मैं समय से पहले ही कैप्टन हो जाऊं तो आश्चर्य नहीं। दो बजे मैं सोया।

परन्तु कुछ तो शराब का नशा, कुछ जूते का ध्यान; जान पड़ता है नींद ठीक नहीं आई क्योंकि मैं लगा सपना देखने।

देखता हूं कि मैं जल्दी-जल्दी उन्नति करता जा रहा हूं और मैंने देखा कि मैं भारत का वायसराय बना दिया गया। शिमला के वायसराय-भवन में मैं रहता हूं। परन्तु मैं उस जूते को अभी नहीं भूला—मेरी सिफ़ारिश पर ब्रिटिश सरकार ने एक नया पदक बनवाया है जिसमें दो जूते अगल-बगल में रखे हैं। इस सोने के पदक का नाम पिगसन पदक रखा गया है और उस भारतीय को दिया जाएगा जिसने सरकार की सदा सहायता की है और सरकार का विश्वासपात्र रहा है। मैं यह भी देख रहा हूं कि पिगसन पदक के लिए बड़े-बड़े राजा-महाराजा और राज-नीतिक कार्यकर्ता लालायित हैं।

वाइसराय-भवन में दीवारों पर मैंने सुनहले जूतों के चित्र बनवा दिए हैं और सरकारी मोनोग्राम को बदलकर मैंने दो सुनहले जूतों का चित्र बनवा दिया है। मैंने विशेष आज्ञा देकर चाय का सेट बनवाया जिसमें प्याले की शकल जूते की तरह है।

मेरी देखा-देखी जितने रजवाड़े हैं, उन्होंने भी मेरी नकल आरम्भ कर दी है। और मेरे आनन्द की सीमा न रही जब सकलडीहा के महाराज ने मेरी दावत की, तब दावत के कमरे में चारों ओर रंग-बिरंगे जूतों से

प्रस्तुत की गई थी। मैंने उन्हें इसीलिए लोगों की गवाही का यह अवसर दे दिया और चमड़ा सिखाने वाली दवाई की अनुमति दे दी। हाँ, एक शर्त थी कि खिड़की की एक ओर जूते का चित्र लगाए रहें।

केन्द्रीय धारासभाओं का संयुक्त अधिवेशन हो रहा है और मैं भाषण पढ़ रहा हूँ। मैं कह रहा हूँ कि भारत को स्वराज्य दिलाने का मेरा पूरा प्रयत्न होगा। विलायत की सरकार भारत वासियों के देश का शासन उनके ही हाथों में देने के लिए निश्चय कर चुकी है। आप लोग उसकी नीयत पर संदेह न करें। आप हमारे साथ सहयोग करें। हम अपने शासन-काल में निम्नलिखित विशेष काम करना चाहते हैं। यदि आपकी सहायता मिलती रही तो मेरे जाते-जाते स्वराज्य मिल जाएगा।

पहली बात तो यह है कि जूते के व्यवसाय को जितना प्रोत्साहन मिलना चाहिए, नहीं मिल रहा है। स्वराज्य-प्राप्ति में जितनी बड़ी बाधा है। भारतीय जूते या तो देशी हैं जो आज भी वैसे ही बनते हैं जैसे मेगास्थनीज ने वर्णन किया है, या विलायत की नकल हैं। नकल से स्वराज्य नहीं मिलता, आप जानते हैं।

यद्यपि भारतीय कला बहुत ऊंचे स्तर पर पहुंच गई है और अब उसमें सुधार के लिए कम स्थान है, फिर भी यदि स्वराज्य लेना है तो भारतीय जूतों में उन्नति करनी ही होगी। इसीपर आपका भविष्य निर्भर है।

गांव-गांव में, नगर-नगर में, प्रत्येक पाठशाला मे, कालेज में, विश्वविद्यालय मे इसकी शिक्षा आवश्यक है और इसकी उन्नति अपेक्षित है। आप मेरे इस संदेश को देश के कोने-कोने में पहुंचाने की दया करें।

म्युनिसिपल बोर्ड और डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के सदस्यों को इस ओर विशेष ध्यान देना चाहिए क्योंकि स्वराज्य की पहली सीढ़ी यही है।

तालियों की गड़गड़ाहट से सारा भवन गूंजने लगा। मैं और आगे बोलने जा रहा था कि देखता हूं कि आंख खुली है, वही बैरक का बंगला है, वही कमरा है, बैरा ट्रे लिए खड़ा है, कह रहा है—'हुजूर, चाय।'

दंगा

कमद से भाकर मैं भोजन कर रहा था। एकाएक फोन की घण्टी बजने लगी। कर्नल साहब बोल रहे थे। बनारस में हिन्दू-मुसलमानों में दंगा हो गया था। चालीस गोरे सिपाहियों के साथ मुझे तुरन्त बनारस जाने की आज्ञा हुई। किसी प्रकार भोजन समाप्त कर एक कार पर मैं और मेरा अरदली और दो लारियों पर चालीस गोरे सिपाही एक बजे रात को कानपुर चल दिए।

(यहां पर कुछ फ्रेंच में लिखा है जिसका अनुवाद मैं नहीं कर सका कुछ-कुछ गाली-सी है।—लेखक)

जनवरी का महीना था। अपने को ओवरकोट में लपेट रखा था। और बीच-बीच में बोतल से ही थोड़ी-थोड़ी ब्रांडी के घूंट ले लेता था। कर्नल साहब पर बड़ी झुंझलाहट आ रही थी। मुझे ही क्यों भेजा? मैं बिल्कुल नया आदमी। कभी न बनारस देखा न उसके सम्बन्ध में कुछ जानता था। ऐसी जगह मुझे भेजने से क्या लाभ? यह भी नहीं बताया कि मुझे करना क्या होगा।

हम लोग ग्यारह बजे दिन को बनारस पहुंचे। बैरेक में सब लोग ठहरे और मैं कलक्टर साहब के बंगले पर पहुंचा। कार्ड भेजा। अन्दर बुलाया गया। मैंने देखा कि कलक्टर साहब का चेहरा नार्वे के कागज के समान सफेद था। आंखों से जान पड़ता कि कई दिनों से सोए नहीं हैं। मेरे अभिवादन करने में ऐसे शब्द निकल रहे थे मानो वे रो रहे हों।

मैंने तो पहले समझा कि इनकी इतनी दयनीय दशा है कि सब प्राण यहां के गत हो गए हैं।

फिर उन्होंने कहा—'कल दस बजे यहां हिन्दू-मुसलमानों में दंगा हो गया।'

मैंने पूछा—'क्यों?'

'यहां एक कब्र है···'

'एक ही कब्र है इतने बड़े शहर में···'

'नहीं। आप पहले पूरी बात तो सुन लीजिए···'

'एक कब्र है, उसीके पास एक हिन्दू का मकान है, उस मक
नीम का पेड़ है···'

मैंने कहा—'मैं सफर से आ रहा हूं—इसी काम के लि
हूं। सब ठीक समझ लेने दीजिए। —यहां एक कब्र है,
मकान है···'

'उसमें नहीं, उसके पास।' कलक्टर साहब ने मुझे ठीक कि

'हां, हां, उसके पास; देखिए कार से सफर करने से जाड़े
दिमाग का खून जम जाता है और कुछ का कुछ समझ में आने
—और उसमें एक पेड़ है। किस चीज का पेड़ आपने बताया ?'

'नीम का।'

'तब ?'

'उस नीम की पत्ती उस कब्र पर गिर पड़ी।'

'पत्ती तो नीचे गिरेगी, ऊपर तो जा नहीं सकती।'

'मगर कब्र पर जो गिरी।'

'तो कहां गिरनी चाहिए थी ?'

'कहीं गिरती, पर कब्र पर गिरी, इससे मुसलमानों के हृदय प
लगा।'

'पत्ती गिरने से धक्का लगा तो कहीं पेड़ गिर जाता तब क्या ह

'सुनिए, उसी समय मुसलमानों ने कहा कि पेड़ काट डाल
हिन्दुओं ने कहा कि कब्र खोद डाली जाए।'

'तो इसके लिए तो साधारण दो-तीन मजदूरों की आवश्यकत
चालीस गोरे और मुझे बुलाने की कोई बात मेरी समझ में नहीं

'यह बात नहीं है। हमें तो दोनों की रक्षा करनी है।'

'तो उसीके लिए हम लोग आए हैं ?'

'नहीं, वहां तो हमने पहरा बिठा दिया है; ये लोग लड़ गए हैं

'तो लड़ने दीजिए, दूसरों की लड़ाई से हमें क्या काम ?'

'हमें तो शान्ति करनी है।'

'लड़-भिड़कर स्वयं ही शान्त हो जाएंगे। जब यूरोप में सौ व
लड़ाई शान्त हो गई, तीस वर्षीय युद्ध समाप्त हो गया, तब इनकी

कितनी देर तक चल सकती है ?'

'परन्तु हमें तो शासन करना है, शान्ति रखनी है। शान्ति
रिकों की रक्षा करनी है।'

'तो हम लोगों को इस सम्बन्ध में क्या करना है ?'

'पहला काम तो यह है कि आप अपने सैनिकों सहित नग
ओर चक्कर लगाइए।'

'इससे क्या होगा ?' मैंने पूछा, क्योंकि चक्कर लग
तक कोई दंगा बन्द होते मैंने नहीं सुना था।

कलक्टर साहब ने कहा—'इससे आतंक फैलेगा औ
जाएंगे और घर से बाहर नहीं निकलेंगे।'

मुझे तो आज्ञा पालन करनी थी। बाहर आया। सबको
हमारे साथ एक देशी डिप्टी कलक्टर भी कर दिया गया
सैनिकों को लिए एक-दो-तीन करते घूमने लगे।

पहली बार मैंने बनारस देखा। परन्तु इसके बारे में मैं अ
इस समय मैंने देखा कि सड़कें बिल्कुल खाली हैं। घर सब ब
दिखाई नहीं पड़ता है। हम लोगों को कोई देखता है तो चि
भाग जाता है, जैसे कोई शेर या चीते को देख ले।

मेरी समझ में नहीं आया कि दंगा कहां हो रहा है
चाहता था कि हिन्दू-मुसलमान कैसे लड़ते हैं। केवल मुंह से
हैं कि मुक्केबाजी करते हैं, कि लाठियों से लड़ते हैं। क्योंकि
यार कानून लागू है। किसीके पास बन्दूक या तलवार तो
किसीके पास चोरी से होगी तो वह भी एकाध। मैं तो सेन
आदमी हूं। मुझे इस प्रकार के युद्ध की प्रणाली पर विश्वास न

मैंने बहुत सोचा, परन्तु समझ में नहीं आया कि
गिरने से लड़ाई क्यों आरम्भ हो गई। मुर्दे को चोट भी नही
कानपुर लौटूंगा तब मौलवी साहब से पूछूंगा कि क्या बात
वस्तु हो तो निरादर या अपमान भी हो। नीम की

छुट्टी मिली। सब सैनिक बैरक में गए। मैं कलक्टर साहब
गया। मैंने कहा—'मुझे तो कोई कहीं दिखाई नहीं दिया।'

वह बोले—'यही तो ब्रिटिश शासन का रोब है। हिन्दो
हम लोगों से बहुत डरते हैं।' बैरक से लौट आया और सोच
भारतवासी क्यों अंग्रेज़ों से डरते हैं। काली चीज़ देखकर
है। हम लोग भारतवासियों से डरें तो स्वाभाविक है, प
चीज़ से डर लगना! हम लोगों को भारतवासियों से
बात थी।

मैं सोचने लगा कि सचमुच बात क्या है जिससे हम लोगों
स्तानवाले डरते हैं; वीर तो ये लोग बड़े होते हैं। यहां के
वीरता की धाक यूरोप में जम चुकी है, बुद्धि में भी यहां के
प्रकार कम नहीं, क्योंकि बहुधा हिन्दुस्तानियों के नाम सुनता
ज्ञान-विज्ञान की प्रशंसा यूरोप के विद्वान भी करते हैं। यहां के
अंग्रेज़ी भी अच्छी बोलते हैं। असेम्बली के भाषण छपा करते
बिलकुल व्याकरण से शुद्ध होती है। इतना ही नहीं, आई०
की परीक्षा भी पास कर लेते हैं, बढ़िया सूट भी पहनते हैं;
बहुत-से लोग मेज पर खाते भी हैं; फिर भी हम लोगों से डरते
क्या है?

मैंने मनोविज्ञान तो कभी पढ़ा नहीं, इसलिए बहुत सोचने पर
बात ठीक मन में नहीं आई। एक बात केवल समझ में आई
जब हिन्दुस्तान में रहनेवालों को पैदा करता है, तब जान पड़ता
का कोई डोज़ मिला देता है क्योंकि तीन-चार महीने मुझे यहां
गए, मैंने देखा कि सभी लोग यहां डरते हैं। हिन्दू मुसलमानों से
मुसलमान हिन्दुओं से; मारे डर के ये लोग स्त्रियों को घर के बा
निकालते; सुनता हूं—मारे डर के रुपयेवाले रुपया बैंक में नहीं
पृथ्वी के नीचे गाड़कर रखते हैं, गांववाले पुलिस के अफसर—
से डरते हैं, नगरवाले कलक्टर से डरते हैं, मूंछवाले बेमूंछवालों
हैं, स्त्रियां पुरुषों से डरती हैं, पुरुष स्त्रियों से डरते हैं। मैंने तो
और सुना वह यही कि यहां के लोगों का मूलमंत्र डर ही डर है।

लोगों से ही नहीं मुर्दों से ये लोग डरते हैं, भूत से ये लोग डरते हैं, पिशाच से ये लोग डरते हैं। तब हम लोगों से डरते हैं तो कोई आश्चर्य नहीं।

बनारस में पिगसन

दूसरे दिन सवेरे मुझे आज्ञा मिली कि आप लोग अपने बैरक में रहें। जब आवश्यकता होगी, बुला लिए जाएंगे। हम लोग दिन-भर बैठे रहे। सन्ध्या समय मैंने एक कारपोरल से कहा कि मैं बाहर जा रहा हूं। अब रात में तो कोई सूचना आने की सम्भावना नहीं है।

निकट के होटल से एक गाइड मैंने बुलवाया और उससे पूछा कि यहां कौन-कौन-सी वस्तुएं देखने योग्य हैं। मैं देखना चाहता हूं। ठीक नहीं है कब यहां से कानपुर लौट जाना हो। गाइड ने कहा कि यहां विश्वनाथजी का स्वर्णमन्दिर, बन्दरोंवाला मन्दिर, औरंगजेब की मस्जिद, घाट, विश्वविद्यालय और सारनाथ देखने के योग्य हैं।

मैंने कहा—'अच्छा, आज नगर देख लूं और कल जितना हो सकेगा देखूंगा।' मैं उसे लेकर कार पर बैठा, और नगर की ओर चला। राह में वह मुझे विशेष स्थानों पर बताता जाता था कि यह कौन-सा स्थान है, इसका क्या महत्त्व है। एक जगह बड़ा पत्थर का भवन मिला जिसके लिए उसने बताया कि यह क्वीन्स कालेज है। मैंने यह पूछा कि क्या यहां रानियां पढ़ती हैं, या रानियों ने बनवाया है? उसने कहा—'नहीं, यह महारानी विक्टोरिया के नाम पर बना है।'

मुझे कुछ अविश्वास-सा हुआ। मैंने कहा—'यहां के लोग भला किसी दूसरे देश की रानी के नाम पर क्यों भवन बनाएंगे? इंगलैण्ड में तो कोई भवन जर्मनी या रूस के राजा या रानी के नाम पर नहीं है।' वह बोला—'यहां का यही नियम है। बात यह है कि

भारतवासी बहुत ही विनम्र तथा त्यागी होते हैं। वह सोचते हैं कि अपने देश में अपने यहां के लोगों की ख्याति उचित नहीं है। हम लोग सब काम दूसरों के लिए ही करते हैं। देखिए, आगे एक अस्पताल मिलेगा। वह भी बादशाह सलामत के नाम पर है। यहां सड़कें भी आप देखेंगे कि आपके ही देशवासियों के नाम पर हैं।'

मैंने कहा कि यह भावना तो बड़ी ऊंची है और तभी शायद तुमने अपना देश भी हम लोगों को दे दिया। वह बोला—'हां, है ही। देखिए, हम लोगों ने लड़ने को सिपाही भेजे। यह आप ही लोगों की सहायता के लिए। हम लोग इस प्रकार दूसरों के लिए ही जीते हैं।'

तब तक हम लोग नगर के बीच पहुंच गए, और उससे पता चला कि इसे चौक कहते हैं। मैंने कहा—'क्यों न कार कहीं खड़ी कर दी जाए और हम लोग पैदल टहलकर देखें।' कुछ-कुछ दूकानें खुली हुई थीं। लोग शीघ्रता से इधर से उधर चले जा रहे थे। गाइड ने बताया कि भय के कारण कुछ दूकानें बन्द हैं। आज शान्ति है, इसलिए इतनी खुल गई हैं।

एक बात और देखने में आई जिससे पता चला कि इस देश में मनुष्यों से अधिक स्वतंत्रता पशुओं में है। मैंने देखा कि एक बैल बड़ी निर्भीकता से मेरे पतलून को अपने सींग से चुम्बन करता हुआ चला गया। उसने इस बात की परवाह नहीं की कि मैं इकतीसवें ब्रिटिश रेजिमेण्ट का कप्टन हूं। मैं कुछ डर-सा गया और देखा कि उसीके पीछे एक और उससे डबल बैल चला आ रहा है, मस्ती से झूमता। गाइड ने कहा कि डर की कोई बात नहीं है। यहां के सांड किसीको हानि नहीं पहुंचाते। महात्मा बुद्ध ने पहले-पहल काशी के ही निकट सारनाथ में अहिंसा का प्रचार किया था, इसीलिए काशी के सांड आज तक बौद्धधर्म का पालन करते हैं।

धर्म का यह प्रभाव देखकर मुझे बड़ी श्रद्धा हुई। हिन्दू और मुसलमान एक-दूसरे की खोपड़ी तोड़ते हैं, और बैल अहिंसा का पालन करते हैं। भारत विचित्र देश है, इसमें सन्देह नहीं। बुद्ध भगवान का प्रभाव भारत में बैलों पर ही पड़ा, इसका दुःख हुआ।

गाइड ने बताया कि साधारण स्थिति में यहां बड़ी चहल-पहल रहती है, परन्तु दंगे के कारण कुछ है नहीं। फिर एक गली में जाकर उसने बताया कि यहां पहले विश्वनाथजी का मन्दिर था। मुसलमानों ने आक्रमण किया तो यहां के देवता कुएं में कूद पड़े। वह जो बैल लाल पत्थर का आप देखते हैं, पहले असली बैल था। एक मुसलमान सिपाही का अंगरखा छू गया, तभी यह पत्थर हो गया। हर एकादशी को यह रोता है। मैंने पूछा कि तुम्हारे देवता तो बड़े डरपोक हैं जो कुएं में कूद पड़े। उसने बताया कि यह बात नहीं है। देवता स्वयं नहीं कूदे। पुजारी उन्हें लेकर स्वयं कूद पड़ा क्योंकि उसे डर था कि यदि कहीं इनकी दृष्टि मुसलमानों पर गई और इन्हें क्रोध आ गया तो सारा संसार भस्म हो जाएगा। तब क्या होगा? पुजारी देवताओं को लेकर फिर निकल आया। फिर नये मन्दिर को बाहर से उसने दिखाया। मैं भीतर जाना चाहता था, परन्तु पता लगा कि इसमें केवल हिन्दू ही जा सकते हैं और वह भी सब हिन्दू नहीं। मैंने पूछा—'ऐसा क्यों?' गाइड ने कहा कि बात यह है कि भगवान का दर्शन सबको नहीं मिलता। जब बहुत तप करके हिन्दू जाति में मनुष्य जन्म लेता है, तभी वह भगवान शंकर का दर्शन कर सकता है।

मैंने पूछा कि यह कैसे हो सकता है कि मनुष्यों में सबसे श्रेष्ठ हिन्दू है। उसने कहा—'सबसे श्रेष्ठ वही है जिसे न दुख में दुख है न सुख में सुख है।

'देखिए, हिन्दू जाति को किसी प्रकार का दुःख नहीं है। इसका मान करो तो भी, अपमान करो तो भी, यह बुरा नहीं मानती। आप चाहें तो इसका उदाहरण अभी देख सकते हैं। किसी हिन्दू को एक लात मारिए। वह आपको देखकर सलाम करके हट जाएगा। तपस्या की चरम सीमा पर पहुंचने पर मनुष्य की ऐसी मनोवृत्ति हो जाती है।'

फिर आगे चले तो सुनसान-सा दिखाई दे रहा था। कुछ दूर आगे चले तो एक नदी दिखाई दी। उसने कहा कि यह गंगाजी हैं जिसे हिन्दू लोग माता कहते हैं।

दस बज रहे होंगे। रात का समय था। सन्नाटा छा रहा था। पानी

धीरे-धीरे बढ़ रहा था। हम लोग किनारे पहुंचे। देखता हूं कि किनारे एक हट्टा-कट्टा आदमी रात में बिल्कुल नंगा, केवल कमर में एक कच्छा मोटे पत्थर पर लगातार उछल-कूद कर रहा है। कई मिनट तक मैं देखता रहा था। उसका कूदना बन्द नहीं हुआ। मैंने गाइड से पूछा कि यह यहां रात में क्या कर रहा है। वह बोला—'यह कसरत कर रहा है।'

मैंने कहा—'बहुत गरीब होगा। इसके घर आंगन नहीं है।' गाइड ने समझाया कि ऐसी बात नहीं है। गंगा के सामने कसरत करने से दूना बल होता है। एक-दो नहीं, ऐसे अनेक कसरत करनेवाले आप इसी घाट पर देखेंगे। इतनी खुली जगह है तो इसका उपयोग करना चाहिए। यह भी गाइड ने बताया कि यहां सवेरे चहल-पहल रहती है। इसलिए कल सवेरे आप आइए। मैं रात में ग्यारह बजे बैरक लौटा। चारों ओर सन्नाटा था। कहीं कोई दिखाई नहीं देता था।

गाइड ने बताया कि देखिए, चारों ओर सन्नाटा है। सब लोग घरों में सोए हैं। इसीलिए दंगे जाड़े में ही होते हैं। गरमी में यहां बहुत-से लोग सड़क पर सोते हैं,इसलिए दंगे नहीं होते। नहीं तो कितने आदमियों के सिर उड़ जाएं। दंगेवाले भी समझ-बूझकर सब काम करते हैं।

काशी के घाट

आज सवेरे ही सवेरे गाइड मेरे बैरक में पहुंचा। मैं चाय पी रहा था। बोला—'चलिए, आज घाट की सैर आपको करा दूं।' मैंने कहा—'इतने तड़के वहां कौन होगा, सर्दी से मुंह में चाय जमी जा रही है।' वह बोला—'इसी समय तो वहां लोग स्नान करने जाते हैं। यही तो वहां चलने का समय है।'

मैं भी किसी प्रकार तैयार हुआ। परन्तु सर्दी में इसी समय चलना मुझे ऐसा जान पड़ा मानो फांसी के तख्ते पर जा रहा हूं। सावन की झड़ी के समान बमों की वर्षा हो रही हो, उसके बीच मैं खड़ा हो सकता हूं, नंगे बदन नागफनी की झाड़ी में लोट सकता हूं, और पागल हाथी की सूंड से चिकोटी काट सकता हूं, किन्तु जाड़े में सवेरे उठना तो एक सपना है और जाड़े में नहाना तो भले आदमियों का काम ही नहीं है।

मोटर कार पर मैं चला—आगे गाइड बैठा था। काशी में देखा—सभी सवेरे ही उठते हैं। पहले तो यहां के मेहतर भी बहुत तड़के उठते हैं और सोचते हैं कि जब हम उठते हैं तब सड़कों को भी जगा देना चाहिए और दोनों हाथों में झाड़ू लेकर सड़कों पर ऐसा चलाते हैं जैसे क्रूसेड के युद्ध में मुसलमान सिपाही तलवार भांजते थे।

मैंने एकाएक देखा कि मेरी मोटर कार बादलों में से चल रही है परन्तु शीघ्र ही पता चला कि यह बादल नहीं। बनारस, जिसे हिंदू लोग काशी कहते हैं और जो उनका पवित्र नगर माना जाता है यह बादल उसी पवित्र नगरी की पवित्र रज है। काशी की म्यूनिसिपैलिटी इसके लिए बधाई की पात्र है क्योंकि मेरे ऐसे विदेशी व्यक्तियों को यह पवित्र मिट्टी कैसे मिलती ?

घाट के किनारे पहुंचा तो कई नाववाले सामने आए और उन्होंने मुझे सलाम किया मानो मेरा-उनका दस-पन्द्रह साल पुराना परिचय हो। यद्यपि मैं हिन्दुस्तानी जानता था, फिर भी बातचीत गाइड ही करता रहा। तीन रुपये पर एक छोटी-सी नौका मिली। ऊपर के भाग पर दो कुरसियां रख दी गईं। कुरसियां बेंत की बनी थीं और पीछे उसी बेंत का ही ऊंचा, लम्बा तकिया बना था। मेरी बगल में गाइड बैठा।

पूरब में सूरज निकलने लगा था। मैं अपने फौजी ओवरकोट में लिपटा हुआ था। देखा कि अनेक लोग पानी में धम्-धम् कूद रहे हैं। यदि मेरे हाथ में होता तो मैं इन्हें विक्टोरिया क्रास अवश्य देता। यह स्नान नहीं, वीरता और साहस का परिचय था। पुरुषों से अधिक स्त्रियां स्नान कर रही थीं। ऐसी वीर महिलाएं हैं, तब न इनकी सन्तान बेल्जियम और फ्रांस के मैदान में अपनी छाती से गोली रोकती है।

काशी मे भिखमगों की भी सख्या उतनी ही है जितनी इस देश में नेताओं की।

विश्वनाथजी की गली में पैठा। मैंने समझा कि परमात्मा के दर्रे की यह नकल की गई है। साड़ वहां इतनी स्वतत्रता से घूम रहे थे जैसे पुरानी खाट मे खटमल घूमते हैं। परन्तु खटमल छोटा जन्तु होने पर भी बड़ो-बड़ो के रक्त चूस लेता है और यह इतने विशालकाय, पर देखा कि छोटे-छोटे बालक भी इनकी पीठ सहलाते चले आ रहे हैं!

फिर मैंने विश्वनाथजी का भव्य कलश देखा जो सुवर्ण से मण्डित था। भारतवासी विचित्र बुद्धि के होते हैं। इतना सोना इम्पीरियल बैंक मे न रखकर मन्दिर के कलश मे लगा दिया ! सवेरे जब सूर्य की किरण उसपर पड़ने लगी तब ऐसा मेरा मन लालच से लुभा गया कि सच कहता हू जी हुआ कि इसे खुरच ले चलू।

मैंने मन्दिर के भीतर देखने की इच्छा प्रकट की, किन्तु पता चला कि भीतर कोई जा नहीं सकता। हिन्दुओं ने ऐसा क्यों किया ? सम्भव है, कोई षड्यन्त्र इसके भीतर यह लोग रचते हों। परन्तु गाइड से पता लगा कि केवल धार्मिक भावनाओं के कारण उसमें कोई अहिन्दू नहीं जा सकता। उसके बाद एक स्थान मे गाइड ले गया जहा मिठाइयों की दूकानें लगातार पक्तियो में थी।

यहा जान पड़ा कि काशी की मक्खियां और स्थानो की मक्खियों से भिन्न हैं। क्योंकि यह मिठाइयों और खाने के पदार्थों पर बड़ी स्वतन्त्रता से आक्रमण कर रही हैं। यदि इनसे कोई रोग उत्पन्न होने का भय होता तो लोग उनपर बैठने न देते। मेरी इच्छा हुई कि इनके कुछ अण्डे विलायत भेज दू, कि वहां ऐसी ही मक्खियां रहें। खाने में धूए का भी पर्याप्त भाग रहता है। और सारी मिठाइयां धूए से इतनी स्नात हो जाती हैं कि वह जर्मप्रूफ हो जाती हैं।

हम लोगो को विशेष चेतावनी रहती है कि किसी स्थान का भोजन न किया जाए जो बैरक से बाहर हों। बाहर केवल अग्रेजी होटलो में ही हम लोग खा-पी सकते हैं। किन्तु मेरी इच्छा कुछ भारतीय मिठाइयां

यहां से मैं चला। गाइड मुझे एक ऐसी गली में ले गया जहां बनार
बिकते हैं। वहां सब दुकानदार मुझे बुलाने लगे, किन्तु मुझे कुछ मोल
नहीं लेना था, केवल देखना था। इसलिए शीघ्रता से इसे समाप्त कर
दिया। यह गली बहुत पतली है और इसके भीतर कोई सवारी नहीं
जाती। पैदल ही चलना पड़ता है। इसमें सड़क भी नहीं है। केवल
पत्थर बिछे हैं। ईसा के दो-तीन हजार वर्ष पहले की यह जान
पड़ती है।

यहां से हमारी कार सारनाथ को चली। मैंने राह में सारनाथ
का इतिहास जान लेना उचित समझा। इसलिए गाइड से पूछा कि यह
सारनाथ क्या है और इसे क्यों लोग देखने जाते हैं। उसने बताया कि
किसी काल में वहां एक नगर था। काशी के शासक बाबा विश्वनाथ के
साले यहीं रहते हैं, इसलिए इसका नाम सारनाथ है। कुछ लोगों के
अनुसार वहां महात्मा बुद्ध, एक बड़े महान व्यक्ति, आए थे, इसलिए
यह विख्यात है।

मैंने पूछा—'यह नगर कब था और क्यों खंडहर हो गया और यह
बुद्ध महात्मा कौन सज्जन थे?' वह बोला—'यह नगर कब था, इसका पता
तो मुझे नहीं है क्योंकि यह बहुत पुराना है। मेरे दादा ने भी ऐसा ही
इसे देखा था और वह कहते थे कि मैंने भी अपने दादा से इसके सम्बन्ध
में ऐसा ही सुना है। चार-पांच सौ साल पुराना तो यह अवश्य ही होगा।
नगर खंडहर क्यों हो गया, इसका कारण इसके सिवाय और क्या हो
सकता है कि घोर बरसात हुई हो किसी समय। बुद्ध महात्मा एक राजा
थे। यह बुध के दिन पैदा हुए थे, इसलिए इनका नाम बुद्ध पड़ गया।
इनके भाई ने इनका राज छीनकर इन्हें घर से निकाल दिया। यह जगत
में बेहोश पड़े थे। इन्हें एक स्त्री ने हलवा खिला दिया और यह जी गए।
तब इन्हें बड़ा दुःख हुआ और यह सारनाथ आए। वहां उन्होंने उचित
समझा कि कोई धर्म चलाया जाए क्योंकि धर्म चलाने में बड़ा सुख और
आदर है। बहुत-से चेले मिल जाते हैं और राजा लोग भी आदर करते
हैं।'

इनके धर्म में विशेषता है। वह यह है कि कितनी ही लात आप

करने चाहिए, कुछ किसीसे कहिए मत। कोई आपको गाली दे दे तो कहिए—ठीक किया। कोई आपकी स्त्री को उठा ले जाए तो कहिए—बड़ा अच्छा किया। कोई आपको पीट दे तो कहिए—आप बड़े भले हैं। अब मेरी समझ में आया कि मुसलमानों ने कैसे यहाँ शासन किया होगा और किस प्रकार अंग्रेज लोग शासन कर रहे हैं। एक बात और उसने बताई कि यह लोग मनुष्य क्या किसी जीव को नहीं मारते। मान लीजिए, यह लोग खाते रहें और थाली में कुत्ता आकर खाने लगे तो उसे हटायेंगे नहीं। सब जीवों पर दया करते हैं। यह सोए रहें और चींटी इनकी नाक में घुस जाए, यह बोल नहीं सकते।

इतनी देर में हम लोग सारनाथ पहुँच गए। एक ऊँचा-सा बुर्ज दिखाई पड़ा जिसपर एक टूटी-सी छोटी-सी मीनार थी। उसने बताया कि हिन्दुओं के सबसे बड़े देवता रामचन्द्र थे। उनकी स्त्री सीता थीं। राम ने सीता को निकाल दिया। तब वह यहीं आकर रहती थीं और उसीमें भोजन पकाया करती थीं। चावल जो वह धोकर फेंक देती थीं वह अब भी यहाँ मिट्टी में दिखाई देता है। एक-एक चावल हजारों रुपये का होता है। अमरीका के लोग यहाँ से मोल ले जाते हैं। और वह जो ईंटों का बड़ा-सा स्तूप दिखाई देता है, वह भी विचित्र है। एक अहीर उसी-पर गाय लेकर चढ़ जाता था और एक बरतन में दूध दुहकर ऊपर-ऊपर कूदकर दूध लिए सीता की रसोई में आता था। यह इसलिए कि सीताजी के लिए दूध धरती से छू न जाए और अचरज की बात तो यह है कि न यह दूध छलकता था, न पृथ्वी पर गिरता था।

और खंडहर देखे। उसने बताया कि यह जो खंडहर है, यहाँ जब घर थे तब उन्हें विहार कहते थे। उनमें रहनेवाले यहाँ से पूरब चले गए। उन्होंने एक प्रान्त बना लिया जिसे 'बिहार' कहते हैं। यहाँ लोगों के न रहने के कारण यह सब खंडहर हो गए।

यहाँ कुछ साधु भी दिखाई दिए। वह पीले रंग के थे और विचित्र प्रकार का कपड़ा पहने हुए थे। चेहरे से जान पड़ता था कि इन्हें कँवल या पांडु रोग हो गया है। मैंने गाइड से पूछा कि यह सबके सब इतने अस्वस्थ क्यों हैं। उसने कहा कि यह लोग अस्वस्थ नहीं हैं। इनका रंग

ही ऐसा है। यह कम खाते हैं और ऐसी वस्तुएं खाते हैं कि रक्त की कमी रहे। यह लोग मांस कोई दे दे, तब खा लेते हैं। मगर अपने हाथों नहीं मारते क्योंकि इनके धर्मप्रवर्तक की यही शिक्षा है।

यहीं एक अजायबघर था। जहां बहुत-सी मूर्तियां रखी थीं। गाइड ने बताया कि सब मूर्तियां यहीं से खोदकर निकाली गई हैं। जान पड़ता है कि पुराने समय में भारतवासियों को कोई काम नहीं था, इसीलिए बैठे-बैठे दिन-भर इतनी बड़ी-बड़ी मूर्तियां गढ़ा करते थे। मेरे विचार से, जब यूनानी लोगों की सभ्यता नष्ट होने लगी तब वहां के मूर्तिकार भाग-कर यहां चले आए। वहां भी मूर्तियां बहुत बनती थीं और वह लोग यहां आकर मूर्तियां गढ़ने लगे। क्योंकि अब भी मूर्तियां बनाना सीखने के लिए यहां से लोग इटली, इंगलैंड आदि देशों में जाते हैं। तब उस काल में कैसे बना सके होंगे? मैंने पूछा—'सीताजी यहां भोजन बनाती थीं, उनकी कोई मूर्ति यहां नहीं दिखाई देती।' गाइड ने कहा कि वह पर्दे में रहती थीं। इसलिए उनका कोई चित्र अथवा उनकी मूर्ति नहीं बन सकी और पीछे बहुत दुःख के मारे वह पृथ्वी के भीतर चली गई। उनकी कोई मूर्ति इस देश में नहीं है।

दो बज गए। मुझे अब भूख और प्यास दोनों लग रही थीं। वहां न कुछ खाने का सामान था न पीने का। इसलिए मैं और कहीं आज देखने जा न सका। कार पर तुरन्त अपने बैरक में लौट आया।

काशी की करामात

अब मुझे कुछ आवश्यक देखना बनारस में रह नहीं गया था। इसलिए कलक्टर साहब से मिलकर मैंने यह जानना चाहा कि हम साथियों के साथ लौट जाएं तो कोई हर्ज तो न होगा।

कलक्टर साहब के यहां जिस समय मैं पहुंचा, एक सभा हो रही थी,

जिनमें अनेक लोग यात्रा के सम्बन्ध में कुछ परामर्श कर रहे थे।
कार्ड देकर उनसे मिलना चाहा। वह स्वयं बाहर आये और
कि मैंने कानपुर तार दे दिया है। अब आप लोग जा सकते हैं।

सबेरे जाना था, इसलिए मैंने सोचा कि सन्ध्या को और घूम
इस समय मैंने सोचा कि अकेले ही घूमूं। एक तांगा मंगवाया
चौक के लिए चल पड़ा। आज चौक में बड़ी भीड़ थी और बड़ी
पहल थी वहां।

मैं नगर के सम्बन्ध में कुछ जानता नहीं था। कोई खतरा भी
था, होता भी सकता था। लेकिन अच्छी तरह घूमने के विचार से
तांगेवाले को छोड़ दिया और चौक में पैदल घूमने लगा। थोड़ी
गया था कि एक स्थान पर बड़ी भीड़ देखी। मैं निकट गया।
देखकर लोग हटकर दूसरी ओर उसी भीड़ में आकर खड़े हो
एक आदमी एक तार लिए हुए था। उसीके कारण इतनी भीड़
मुझे देखते ही एक कान्स्टेबल आकर भीड़ हटाने लगा।

मैं वहां से आगे चल पड़ा और जेब में हाथ डाला तो हाथ जे
नीचे निकल आया और सिगरेट केस गायब था। किसीने बड़ी स
से जेब कतर दी थी। वह बाहरी जेब थी। उसमें पैसे तो नहीं थे,
सिगरेट-केस चांदी का था। निकट ही थाना था। मैंने सोचा कि
अवश्य करनी चाहिए। मैं वहां गया, तो कई कान्स्टेबलों ने
किया। मैंने वहां के अफसर को खोजा तो उनके पास सूचना भेजी
और आध घंटे बाद वे वह आए। मैंने उन्हें अपना परिचय दिया
सब हाल बताया तो उन्होंने कहा कि आप बाहरी आदमी हैं
ऐसा हुआ। और उसका पता लगाना असम्भव है। परन्तु आप
दीजिए। और मुझे उपदेश देने लगे कि मूल्यवान वस्तुएं बाहर की
में नहीं रखनी चाहिए। इनके लिए एक जेब भीतर बनवाना आव
है। वह बहुत दयावान भी जान पड़ते थे। बोले—'जब आप
करें तब मूल्यवान वस्तु को घर के भीतर तिजोरी में बन्द कर दिया
और जब बनारस आवें अथवा किसी बड़े शहर के स्टेशन पर पहुं
भीड़ के पास न ठहरें या खड़े हों। इसीलिए पुलिस सदा भीड़ को

कुछ लोगों को तो सड़क के किनारे बैठे देखा कि स्नान करके एक कपड़े का एक टुकड़ा ओढ़कर चल पड़े। यह है यहाँ की चाल यह एक है। गर्मी की ऋतु में लोग ऐसे ही रहते होंगे, कम से कम घर में। मेरा ऐसा अनुमान है कि बर्लिन के 'न्यू मार्केट' (न्यूडिस्ट कॉलोनी) का प्रचार यदि भारतवर्ष में हो तो सबसे अधिक सदस्य काशी में होंगे।

दूसरी बात जो यहाँ की मुझे अच्छी लगी, वह यहाँ की सड़कें। इनपर बहुत कम रुपये व्यय होते होंगे, इसलिए कि म्यूनिसिपैलिटी को कम पैसा लगाना पड़ता होगा और नगरवासियों को आनन्द होता होगा। देखने में ऐसा ज्ञात पड़ा कि काशी में अधिक सड़कें उस समय बनी थीं जब हमारी स्वनामधन्या महारानी विक्टोरिया ने प्रथम पुत्र को जन्म दिया था और गाइड से यह पता चला कि फिर उनकी मरम्मत किसी ऐसे समय होगी जब कोई ऐसी ही विशिष्ट घटना होगी। इस प्रकार से रुपये के व्यय से म्यूनिसिपैलिटी बच जाती है। कुछ सड़कें ऐसी भी मिलीं जिनमें सरलता से धान की खेती हो सकती है। नागरिक लोग इससे भी लाभ उठाएंगे, इसमें सन्देह नहीं।

तीसरी बात जो यहाँ की विशेषता है, वह है—पान की दुकानें। कोई सड़क, चौमुहानी, तिमुहानी, नाका, मोड़, चौक ऐसा नहीं जहाँ एक ओर इससे अधिक पान की दुकानें न हों। बनारस में जितने मन्दिर नहीं उतनी पान की दुकानें हैं। यदि आपको गंगा तट मिले और सड़कों की बीस साल से मरम्मत न हुई हो और अगणित पान की दुकानें हों तो समझ लीजिए कि वह नगर काशी है।

मेरी बड़ी इच्छा पान खाने की हुई। कानपुर में तो खा नहीं सकता था। हम लोगों को सभी वस्तुएं खाना अथवा ऐसे कार्य करना जो भारतवासी करते हैं, वर्जित है क्योंकि कोई ऐसा काम हम लोग नहीं कर सकते जिससे यह लोग समझें कि हम भारतीय हैं अथवा भारतीयों से इन्हें सहानुभूति है। इसीलिए मैंने सोचा कि चलते-चलते इसे देखूं कि इसका स्वाद कैसा होता है और क्यों लोग इसका इतना सेवन करते हैं। इसीलिए चलने के पहले गाइड से मैंने पान मंगाकर खाना चाहा।

अपने देश के रहनेवालों के लिए मैं पान का थोड़ा वर्णन कर देना

आश्चर्य अनुभव करता हूं। पान एक पत्ता होता है। इसकी शक्ल हृदय की भांति होती है। इस पत्ते के भीतर चूना, कत्था और सुपारी की कतरन रखी जाती है और फिर उसे मोड़कर बेलन की शक्ल का बनाते हैं; और तब दो या चार एक साथ लोग खाते हैं। मैंने ड्राइवर से सुना कि जो जितना ही अधिक पान खाता है वह उतना ही बड़ा रसिक समझा जाता है। बहुत-से लोग इसके साथ तम्बाकू की पत्ती खाते हैं। इसके खाने का पुरुषों पर वही परिणाम होता है जो स्त्रियों को लिपस्टिक लगाने का, अर्थात् अधर लाल हो जाते हैं।

मैंने ड्राइवर से पूछा कि पान यहां के लोग क्यों खाते हैं, कब खाते हैं, कैसे खाते हैं? उसने बताया—'भगवान एक बार पृथ्वी पर मनुष्य का रूप धारण करके आए। उनका नाम था कृष्ण। उनका एक यह स्वभाव पड़ गया कि इधर-उधर से मक्खन, दही, मलाई उठा-उठाकर खा जाते थे। एक बार इसी प्रकार से उन्होंने खाया और उनके ओठों पर मक्खन लगा रह गया और पकड़े गए। लोगों ने मारने को दौड़ाया। वह भागे। भागकर एक कदम्ब के पेड़ के नीचे बड़े दुःख में मुंह बनाकर बैठे थे। सुनसान स्थान था। वह बैठे थे। टपाटप आंसू गिर रहे थे। उधर से एक लड़की आई। इन्हें रोते देखकर उसको दया आ गई, बोली—क्यों रोते हो?—इन्होंने सारा हाल बता दिया। उसने कहा—तो क्या हुआ? इसमें रोने की क्या बात है?—इन्होंने कहा—दुःख इस बात का है कि अब आगे कैसे खाऊंगा। लोग समझेंगे इन्होंने ही खाया है।—लड़की ने कहा—इतनी-सी बात!—वह दौड़कर गई और एक पत्ते में कुछ लपेटकर लाई और बोली—इसे खा लो। मुख से दही और मक्खन की सुगन्ध भी नहीं आएगी और अधर भी लाल हो जाएंगे। कुछ पता नहीं चलेगा। मेरा अधर देखो। यह जो प्रवाल के समान है, इसी के कारण है।—तबसे कृष्ण महाराज एक डिबिया में पान बांधकर अपने दुपट्टे में गठियाए रहते थे। जहां मक्खन खाया उसके बाद दो बीड़े पान; जहां दही खाया, दो बीड़े पान। उस लड़की के सिवाय कोई यह रहस्य जानता नहीं था। तभी से उस लड़की से, जिसका नाम राधा था, कृष्ण से गहरी मित्रता हो गई।'

महाभारत के युद्ध के पश्चात् कृष्ण ने इसका रहस्य अर्जुन को बताया र तब से सब लोग जान गए और सब लोग पान खाने लगे। जो धिक धार्मिक हैं वह भगवान की भांति इच्छा रखते हैं। इसी प्रकार । का खाना आरम्भ हुआ। यह हिन्दुओं की संस्कृति का चिह्न है। नहीं खाते वह आर्य हैं या नहीं, इसमें सन्देह है।

गाइड ने फिर कहा कि खाने का प्रश्न कठिन है। प्रत्येक पान ाट पर खाना तो अति उत्तम है। परन्तु एक-एक घटे पर भी खाया सकता है। गाइड ने यह भी कहा कि मैंने तो वेद पढा नहीं है, किन्तु ा है कि उसमें लिखा है कि जो दो सौ बीड़े दिन में खाए वह महर्षि है, पचास खाए वह ऋषि, जो पच्चीस खाए वह साधु और जो दस तक ए वह मनुष्य और इससे कम खानेवाले इतर योनियों में।

ज्जावती लड़की

पान की इतनी प्रशंसा सुनकर मैंने अपने विचार को काम में लाना उचित समझा और चार बीड़े पान मुह में रखे। फिर उसे दात से ने लगा। कूचने के दो मिनट बाद ही क्या देखता हू कि मेरे मुख से : धाराएं फूटकर निकल पड़ी। एक मेरी दाहिनी ओर कोट के कालर से होती बह चली, दूसरी मेरी बाईं ओर। तीसरी नेकटाई पर से : चौथी गरदन पर से होती हुई कालर के भीतर-भीतर सीने की : बह निकली, जैसे किसी झरने से चार नदियां बह निकलें। : पड़ता था कि मैं लडाई के मैदान में हू। गोली लगी है और रक्त धाराएं बह चली हैं।

मुह में स्वाद न मीठा न खट्टा, न तीता न नमकीन। मैंने रूमाल ाला ही था कि कोट पर से पोछूं कि गले में न जाने क्या फस गया : मुझे खासी आने लगी। खासी के साथ मैंने सोचा कि सब थूक दूं

परन्तु साहब ने कहा कि इसे खो नहीं खाते। पान पत्ते चबाइए और उनका रस धीरे-धीरे कण्ठ के नीचे उतारते जाइए। मैं बकरी की भाँति जुगाली करने लगा और उसका रस गले के भीतर उतारने लगा। धीरे-धीरे क्या देखता हूँ कि कुछ हल्की मचली-सी जान पड़ने लगी और एक विचित्र हर्ष का मन होने लगा। आइने में मुख जो देखा तो जान पड़ा कि दांत नहीं हैं, माणिक के टुकड़ों की पंक्तियाँ हैं और ओंठ पके शहतूत के टुकड़े। स्वाद तो मुझे अच्छा लगा, किन्तु दांत लाल हो जाना कुछ खटका।

मैंने कुल में खूब पान खा लिए, फिर सब लोग लारी पर सवार हो कर कानपुर के लिए चल पड़े। साहब को मैंने दस रुपये का एक नोट दिया। वह लारी तक झुक-झुककर सलाम करता रहा। पन्द्रह बार से कम सलाम उसने नहीं किया होगा। प्रति सलाम एक रुपये से भी कम पड़ा। जान पड़ता है भारतवर्ष में सलाम बहुत सस्ता है।

लारी चली जा रही थी और हम लोग झपकियाँ लेते हुए चले जा रहे थे। एकाएक हमने देखा कि आठ-दस आदमी चले आ रहे हैं और साथ में एक डोली है जो चारों ओर से बन्द है, और डोली के भीतर से रोने का स्वर सुनाई दे रहा है। पहले मैंने उधर विशेष ध्यान नहीं दिया। जब लारी निकट होने लगी तब मुझे रोना और स्पष्ट सुनाई देने लगा। मैंने लारी को धीरे-धीरे चलाने की आज्ञा दी।

इस झुण्ड के निकट आने पर यह स्पष्ट हो गया कि यह लोग किसी स्त्री को उस डोली में बन्द किए हुए हैं और उसके रोने से यह भी जान पड़ा कि इसे यह लोग भगाए चले जा रहे हैं। मैंने सिपाहियों को आज्ञा दी कि इन्हें पकड़ लेना चाहिए। लारी खड़ी कर दी गई और हम लोगों ने इस समूह को घेर लिया।

हम लोगों के उतरते ही दो-तीन आदमी तो भाग गए। बाकी लोग सब घिर गए। डोली धरती पर रख दी गई और रोने का स्वर और भी तीव्र हो गया। मेरा विश्वास और भी दृढ़ हो गया। हम लोगों में मैं ही एक व्यक्ति था जो कुछ हिन्दुस्तानी बोल सकता था। मैंने पूछा—'तुम लोग क्यों इसे पकड़े ले जा रहे हो? छोड़ दो इसे।' मैं विशेष कठो

ा नहीं चाहता था। इसलिए कहा कि यदि तुम लोग इसे छोड़ दो
मैं कुछ नहीं कहता, नहीं तो तुम सब लोगों को पुलिस में दे दूंगा।
लोग इसे कहां से भगाए चले जा रहे हो?'

मेरी बात सुनकर सब डर गए जिससे मेरा विश्वास और ठीक जम
। डोली में रोने की आवाज और बढ़ गई। मैंने फिर अपनी बात
ाई। एक आदमी हाथ जोड़े हुए मेरे सामने आया और बोला कि
मेरी स्त्री है। इस प्रकार के बहाने मैं जानता था। स्त्रियों को भगाने-
े इसी प्रकार का बहाना किया करते हैं। अन्त में जब इन लोगों ने
माना तब मैंने सैनिकों को आज्ञा दी—'इन्हें घेरकर ले चलो।'

सैनिकों ने पूछा—'कहां?' अब मेरी समझ में यह बात नहीं आई
इन्हें कहां ले जाऊं। कानपुर ले जा नहीं सकता था। इतनी दूर!
ी में स्थान होता तो वह भी सम्भव होता। कानून के फंदे में आए
लोगों को छोड़ देना सम्राट के प्रति विश्वासघात होता। इस देश की
ि और रक्षा के लिए ही तो हम लोग यहां पर हैं। इसे कैसे त्याग सकते
उत्तरदायित्व कैसे छोड़ दें? बड़ी उलझन में पड़ा। बनारस से पांच-
मील हम लोग चले आए थे। यही सम्भव था कि फिर वहीं लौटें।
इन सब लोगों को पैदल चलना पड़ेगा।

अन्त मे मैंने यही निश्चय किया। सैनिकों की देख-रेख में इन्हें
रस भेज दिया जाए और वहीं यह लोग पुलिस के हवाले कर दिए
। मैंने एक छोटी-सी रिपोर्ट तैयार की। उन लोगों मे से सभी हाथ
कर न जाने क्या-क्या कह रहे थे। अधिकांश तो मेरी समझ
ाया नही। परन्तु उनकी बातो का तथ्य था कि हम लोग निर्दोष हैं,
लोगो को छोड़ दिया जाए। परन्तु न्याय करना हम लोगों का परम
है। ब्रिटिश शासन का इतना विस्तार केवल न्याय के बल पर हुआ है।
न्याय के बल पर यह टिका भी है। इसलिए छोड़ना तो असम्भव बात
और कोई साधारण बात होती तो मैं क्षमा कर देता। एक स्त्री
इस प्रकार भगाना तो सभ्यता और समाज के प्रति भी अपराध है।

मैं चार सैनिको को आदेश दे रहा था कि इन्हें बनारस में पुलिस को
वह लोग रेल से कानपुर आएं कि एक व्यक्ति घोड़े पर जा रहा था।

निकट जाने पर देखा कि वह कोई पुलिस अफसर था। वह वर्दी भी पहने हुए था। मैं भी वर्दी में था। मैंने उसे रोका। उसने मुझे सरकारी सलाम किया। मैंने अंग्रेजी में उसे पूरा विवरण बताया और कहा कि यह लोग बदमाश जान पड़ते हैं। इस प्रकार के कृत्य करते हैं। यह तो संयोग से हम लोगों ने देख लिया। इन लोगों ने समझा होगा कि इस राह में कौन मिलता है। वह पुलिस का इंस्पेक्टर दारोगा था। उसने मुझे बहुत-बहुत धन्यवाद दिया। और वह उनको बुलाकर सब घटना पूछने लगा। कुछ बात करने के बाद वह मुसकराया और मेरे पास आकर बोला— 'यह सब आदमी निर्दोष हैं।' मुझे बड़ा क्रोध आया। मैंने कहा कि यह कैसी बात है। दारोगा ने कहा कि बात यह है कि भारतवर्ष में यह प्रथा है कि विवाह में बहुधा अपनी स्त्री को घर नहीं ले जाते। कुछ दिनों के बाद ले जाते हैं। वही प्रथा यह है। और पति के साथ इतने आदमी उसकी ससुराल गए थे। और यहाँ की यह भी एक प्रथा है कि जब दुलहिन घर छोड़कर पति के साथ जाने लगे, तब उसे रोना पड़ता है। चाहे उसकी इच्छा हो या न हो, रोना आवश्यक है। जो न रोए वह लड़की निर्लज्ज समझी जाती है और उसकी हँसी होती है। और जो जितना अधिक रोती है, वह उतनी ही शिष्ट और शालीन समझी जाती है। गाँव-भर में उसका उतना ही नाम होता है। राह-भर और पति के घर तक रोते जाना माता-पिता के प्रति प्रेम का लक्षण है।

मुझे यह सुनकर बड़ा आश्चर्य हुआ। मैंने मन में सोचा कि भारत, तू विचित्र देश है! और भारी बड़ाई।

मुआयना

इतने दिनों तक भारतवर्ष में रहने के पश्चात् मुझे यह ज्ञात हो गया कि सेना विभाग में काम बहुत ही कम है। खूब भोजन करना, घोड़सवारी

करते हैं। मैंने पूछा—क्या कुछ मैं तुम्हारे काम आ सकता हूं, मुझे ये क्या दक्षिणा ? मौलवी साहब बोले कि इससे बढ़कर भी क्या दर्शन उनके दरबार के बाहर जाती है।

'परन्तु मैं जा कैसे सकता हूं'—और मैंने कहा—'इतनी जल्दी इस्लाम के सब नियम भी सकता हूं, परन्तु इन लोगों की उन्हीं जैसी समझ सकता हूं ? फिर भी ऐसे स्थान पर मैं जा कैसे सकता हूं ? लोग क्या समझेंगे।'

मौलवी साहब ने कहा कि मैं सब प्रबन्ध कर दूंगा।

दूसरे दिन इसी बात पर विचार किया और मौलवी साहब ने कहा कि यदि मेरी राय मान सकें तो आप अचकन और चूड़ीदार पाजामा पहनकर चलें तो अधिक उत्तम होगा। वैसे तो आप चाहें जिस प्रकार का कपड़ा पहनकर जा सकते हैं, परन्तु यदि आप इन कपड़ों को पहनेंगे जिन्हें मैं बताता हूं तो सबके साथ बैठ सकेंगे।

मैंने इसे स्वीकार किया। मैंने कहा कि यदि इस प्रकार से प्रबन्ध हो सके तो मैं चल सकूंगा।

मौलवी साहब आठ बजे रात मैं मेरे पास आए। मैंने एक तांगा मंगवाया और चला। अर्नेस्ट साहब से कहला दिया कि मौलवी साहब के यहां भोजन है, मैं वहीं जा रहा हूं, देर हो सकती है।

हम लोग साढ़े आठ बजे ठीक स्थान पर पहुंच गए। वहां फर्श बिछा हुआ था, रोशनी गिलासों में जल रही थी। कमरे के एक ओर एक छोटी-सी चौकी रखी थी और उसीके निकट एक गद्दी बिछी थी। एक तकिया रखा था, दीवार के चारों ओर कुर्सियां रखी थीं। उन्होंने एक पर जाकर बैठ गया। केवल चार-पांच आदमी वहां दिखाई दिए। नौ बजे, फिर दस, सब कुछ-कुछ लोग दिखाई दिए। मैंने सोचा था कि दस बजे तक सब कार्य समाप्त हो जाएगा, किन्तु अभी तो लोग आ रहे थे। साढ़े दस बजे एक सज्जन आए जिनके आते ही सब लोग खड़े हो गए। इस समय वहां जितने लोग थे उनमें अधिकांश दाढ़ी रखे हुए थे। एक चौथाई इंच से लेकर डेढ़ फुट तक की दाढ़ियां दिखाई पड़ीं। ऐसे लोग भी थे जिनके दाढ़ी नहीं थी और कपड़े भी विचित्र

थे। कुछ लोग कमर से चेक की डिजायन के कपड़े लपेटे हुए, कुछ लोगों के धाव मे ऐसा जान पडता था कपड़ा लपेटकर सिला गया है।

कुछ लोग इतना चौड़ा पायजामा पहने हुए थे जिसमे एक मनुष्य को सरलता से शरण मिल सकती थी। टोपिया भी विभिन्न भांति की थी। कोई कब्र की शकल की, कोई कुतुब मीनार की तरह, किसी-किसी मे एक पूंछ लटक रही थी, कुछ लोग ऐसी टोपियां लगाए थे जिनसे जान पडता था कि बैलों का खल उलटकर सिर पर रख लिया है। रंग भी वैसे ही अनेक थे। चूने पुती दीवार-सी सफेद से लेकर ऐसो कि जिन्हें निचोडा जाए तो दो आउंस तेल कम से कम निकल सकता था।

उर्दू के कवि और कविता

ग्यारह बजे से कविता आरम्भ हुई। पहले जो साहब आए वह युवक थे। अपने घुटनो के बल बैठ गए। फिर अपनी जेब में से उन्होंने एक मोड़ा-मडा बादामी कागज़ का टुकड़ा निकाला और एक-एक पंक्ति गा-गाकर पढने लगे। सुननेवाले दो-दो तीन-तीन मिनट पर वाह-वाह की ध्वनि निकाल रहे थे और लोग झूमते भी जाते थे। कभी-कभी तो इतने ज़ोर से शोर होता था कि समझ में नहीं आता था कि कवि महोदय क्या कह रहे हैं।

मेरी समझ मे कभी एकाध शब्द आ जाता था। जब वहां पहुंच ही गया था तब मैंने सोचा कि कुछ समझता भी चलूं। मैंने मौलवी साहब से कहा कि आप मेरे निकट बैठें तो इस मुशायरे का आनन्द कुछ मैं भी उठाऊं।

मौलवी साहब मेरी बगल मे आकर बैठ गए। एक बार एक कवि ने एक शेर पढ़ा। लोगों ने 'वाह्-वाह्' का तांता बांध दिया और लोग लगे चिल्लाने—'मकरी शाह्, मकरी शाह्!' मैंने मौलवी साहब से पूछा

साल हो गया।

मैंने मौलवी साहब से पूछा कि क्या बात है। इस बार सब लो चुप क्यों हैं?

मौलवी साहब बोले—'आपने बड़ी गलती की। इसने एक ऐस बात कही है जो मुसलमानी विचारों के विरुद्ध है! इसने कहा कि एक समय वह आएगा जब इस्लाम आदि कोई धर्म पृथ्वी पर रह नहीं जाएगा।'

मैंने कहा कि इसमें क्या। यह तो कविता है। मौलवी साहब ने कहा कि नहीं, कविता में भी हम लोग कोई ऐसी बात नहीं लाना चाहते जो धर्म और परम्परा के विरोध में हो। मैंने कहा—'तब तो नवीन विचार आ ही नहीं सकते।' मौलवी साहब ने कहा कि नवीन विचार तो संसार में कुछ हैं नहीं। जो लिखा जा चुका है, वही है। यह लड़का रूसी विचारों को माननेवाला है। आपको जब प्रशंसा करनी हो तब मुझसे पूछकर 'वाह-वाह' कीजिए।

इसके बाद उसने कुछ और पढ़ा। इसपर एक बहुत वृद्ध मौलाना खड़े हो गए और कहा कि सभापति महोदय से मेरा अनुरोध है कि इनका पढ़ना बन्द कर दिया जाए। इस्लाम का यह अपमान है। उस युवक ने कहा कि मैं बुलाया गया हूं। मुझे न पढ़ने देना मेरा अपमान है। इसीमें सभापति महोदय ने अधिवेशन बन्द कर दिया।

मैंने मौलवी साहब से पूछा कि जहां कोई रूसी विचारों का नहीं पहुंचता वहां का मुशायरा कैसे समाप्त किया जाता है?

तीन बज रहे थे। मैंने उस युवक को धन्यवाद दिया कि मुशायरा समाप्त करने में उसने बड़ा सहयोग किया।

ासन का रहस्य

कानपुर में रहते-रहते जीवन ऊब-सा गया। नित्य वही दिनचर्या, ित्य वही लोग और नित्य वही क्लब की सन्ध्या। मन हो रहा था कि ुट्टी लेकर इगलैण्ड दो-तीन महीने के लिए हो आऊं। धीरे-धीरे गरमी ी बढ़ रही थी। परन्तु अभी छुट्टी नहीं मिल सकती थी। कर्नल ाहब ने एक दिन क्लब मे मुझे उदास देखकर कहा कि तुम्हारा स्वास्थ्य ीक नहीं है। मैंने उन्हें सब बातें बता दीं। उन्होंने कहा कि तुम पहली ार इस देश मे आए हो, यहा की गरमी सह न सकोगे, पहाड़ पर चले ाओ। मेरे मन में भी बात बैठ गई।

रेलवे कम्पनी को लिख, अनेक पहाड़ी नगरो के सम्बन्ध मे साहित्य एकत्र किया। कई पुस्तिकाएं भी एकत्र की। उन्हें पढ़ने से जान पड़ा कि सभी पहाड़िया स्वर्ग के समान हैं। शिमला पर पुस्तक पढ़ने से जान पड़ा कि ससार मे शिमला से बढ़कर कोई पहाड़ है ही नहीं।

परन्तु जब दार्जिलिंग के सम्बन्ध मे पढ़ने लगा तब समझ मे आय कि दार्जिलिंग के सामने सभी पहाड़ तुच्छ हैं। इसी प्रकार जब जो पुस्तव पढ़ता, जान पड़ता है कि यही नगर सबसे उत्तम गरमी का समय बिताने योग्य है।

मैं दो बातो की ओर ध्यान देता था। ऐसा पहाड़ हो जहा नाच क अच्छी सुविधा हो, गोल्फ और क्रिकेट खेलने की अच्छी व्यवस्था हो, शरा खूब मिलती हो, और भारत के सम्बन्ध मे अध्ययन करने के लिए कु अवसर मिले। मैंने बनारस के सम्बन्ध मे रायल जियोग्राफिक सोसाइटी के पास एक लेख भेजा था जिसकी बड़ी प्रशसा हुई और उनक त्रैमासिक पत्रिका मे वह लेख प्रकाशित भी हुआ। मैं इस देश के सम्बन मे और भी लिखना चाहता था, इसलिए यहां के विख्यात स्थान औ पुराने ऐतिहासिक स्थानो को देखने की भी बड़ी लालसा थी।

मैं स्वय निश्चय नही कर सका कि कहा जाना चाहिए। कर्न साहब से पूछा। उन्होंने कहा कि देखो, उसी पहाड़ पर जाना चाहि

जहाँ हिन्दुस्तानी लोग काम करते हों। मैंने कहा कि हिन्दुस्तानी लोग कुछ दीन तो होते नहीं और मैं इनके सम्बन्ध में कुछ जानना चाहता हूँ। यदि ऐसे स्थान पर जाऊँ जहाँ यह लोग भी हों तो पीछे बहुत-सा काम निकल सकता है। कर्नल शूमेकर ने कहा कि यह सबसे बड़ी भूल होगी। यदि हम उनसे मिलने-जुलने लगेंगे तो हम उनपर शासन नहीं कर सकेंगे। जिनपर शासन करना हो उनसे कभी हिल मिलकर नहीं रहना चाहिए। निकटता कभी नहीं करनी चाहिए। उन्हें सदा हेय समझना चाहिए। और जो बातें उनकी अच्छी भी हों उन्हें भी यही कहना चाहिए कि यह किसी काम की नहीं है। मैंने कहा कि यह तो झूठी बात होगी, अच्छी बात को बुरी बात कहना। कर्नल साहब ने कहा कि यदि झूठ बोलने से फल अच्छा मिले तो कोई पाप नहीं। और एक बात तुम नहीं जानते। ऐसा कहते-कहते स्वयं भारतवासी विश्वास करने लगते हैं कि इन्हीं की बात सच होगी। इसलिए हमारे देश के कितने ही लोगों ने किताबें लिखी हैं। जिनमें मनमाना लिख दिया है और भारतवासी उसीको प्रमाण मानने लगे हैं। यदि तुम आज एक पुस्तक लिख दो और उसमें लिख दो कि मद्रास में एक पत्थर मिला है जिसपर एक लेख लिखा था, जो अब घिस गया है, कि उनके बड़े भारी राजा का नाम राम इसलिए पड़ा कि वह रोम से आए थे तो भारत के सब विद्वान इसे मान लेंगे और कालेज तथा स्कूल की सब पुस्तकों में यही छापा जाएगा।

जो चतुर हैं वह इसीपर एक ग्रन्थ लिख डालेंगे और कहेंगे कि किसी पुराण में भी इसका संकेत आया है, किसी शास्त्र में भी। और विश्वविद्यालय से उन्हें डाक्टरेट की उपाधि भी मिल जाएगी। मैंने कहा—'किंतु हम लोग इंगलैण्ड में कहते हैं कि भारतवासियों को हम स्वराज्य के लिए शासन सिखला रहे हैं। ऐसी अवस्था में उन्हें पथभ्रष्ट करना कहां तक ठीक होगा ?'

कर्नल साहब बोले कि कहने के लिए जो जब चाहे कह दो, फिर उसे बदल सकते हो। तुम जानते नहीं। यह हमारी जाति की विशेषता है। परिवर्तन जीवन है, स्थिरता मृत्यु। सरिता में जीवन है, पहाड़

में मृत्यु।

मैं तो पहाड़ के सम्बन्ध मे पूछने गया था और विषयान्तर होने लगा।

मैं विषय बदलनेवाला ही था कि कैप्टन बफेलो 'पायनियर' की प्रति लिए हुए आए और बड़ी शीघ्रता से बोले—'कर्नल साहब, मैं नष्ट हो गया।

कर्नल साहब ने कहा—'बात क्या है ?' बफेलो साहब ने कुछ कहा नही केवल समाचार पर उंगली दिखाई। समाचारपत्र मे २७ अप्रैल का तार कानपुर के संवाददाता का छपा था कि श्रीमती बफेले सत्रहवें मराठा राइफल नाम की पलटन के कप्तान शेपर्ड के साथ भाग गईं।

कर्नल साहब ने कहा कि बात क्या है ? बफेलो साहब ने कहा कि मैं शिकार के लिए चार दिनों से बाहर था। कल रात मैं देर से लौटा सवेरे पत्नी के स्थान पर यह समाचार मिला। अब क्या करना चाहिए ?

कर्नल साहब बोले—'करना क्या चाहिए ? विवाह-विच्छे की एक अर्जी कचहरी मे देनी चाहिए। और दूसरे विवाह के लि चेष्टा करनी चाहिए।'

मैंने कहा—'किन्तु यह तो जानना चाहिए कि कारण क्या है ? औ क्यों कैप्टन शेपर्ड के साथ वह भागी। इस समाचार में कहां तक सचा है; यह भी जानना आवश्यक है।'

कर्नल साहब ने कहा कि इसपर बेकार समय नष्ट करना है स्त्रियों का भाग जाना ही स्वाभाविक है, घर मे रहना ही अस्वाभावि है। रह गई दूसरे विवाह की बात। कैप्टन बफेलो, तुम्हारी क्या उ है ? कैप्टन ने कहा कि उन्तीस वर्ष, सात महीने, तीन दिन। कर्न साहब बोले—'तुम तो कप्तान होने योग्य नहीं हो। मेरा जब विव हुआ तब मैंने पत्नी से कह दिया—देखो, यदि तुम मुझे छोड़ोगी तो दूसरे ही दिन दूसरा विवाह कर लूंगा। और इससे कुछ मतलब न कि किससे। यदि सौ स्त्रियां छोड़ेंगी तो सौ विवाह करूंगा। फल य हुआ कि आज सैंतालीस साल विवाह के हो गए पर कभी अलग हो की बात नहीं आई।'

जहां हिन्दुस्तानी लोग कम जाते हों। मैंने कहा कि हिन्दुस्तानी लोग कुछ छीन तो लेंगे नहीं और मैं इनके सम्बन्ध में कुछ जानना चाहता हूं। यदि ऐसे स्थान पर जाऊं जहां यह लोग भी हों तो पीछे बहुत-सा काम निकल सकता है। कर्नल शूमेकर ने कहा कि यह सबसे बड़ी भूल होगी। यदि हम उनसे मिलने-जुलने लगेंगे तो हम उनपर शासन नहीं कर सकेंगे। जिनपर शासन करना हो उनसे कभी हिल-मिलकर नहीं रहना चाहिए। मित्रता कभी नहीं करनी चाहिए। उन्हें सदा हेय समझना चाहिए। और जो बातें उनकी अच्छी भी हों उन्हें भी यही कहना चाहिए कि यह किसी काम की नहीं है। मैंने कहा कि यह तो झूठी बात होगी, अच्छी बात को बुरी बात कहना। कर्नल साहब ने कहा कि यदि झूठ बोलने से केवल अच्छा मिले तो कोई पाप नहीं। और एक बात तुम नहीं जानते। ऐसा कहते-कहते स्वयं भारतवाले विश्वास करने लगते हैं कि इन्हीं की बात सच होगी। इसलिए हमारे देश के कितने ही लोगों ने किताबें लिखी हैं। जिनमें मनमाना लिख दिया है और भारतवासी उसीको प्रमाण मानने लगे हैं। यदि तुम आज एक पुस्तक लिख दो और उसमें लिख दो कि मद्रास में एक पत्थर मिला है जिसपर एक लेख लिखा था, जो अब घिस गया है, कि उनके बड़े भारी राजा का नाम राम इसलिए पड़ा कि वह रोम से आए थे तो भारत के सब विद्वान इसे मान लेंगे और कालेज तथा स्कूल की सब पुस्तकों में यही छापा जाएगा।

जो चतुर हैं वह इसीपर एक ग्रन्थ लिख डालेंगे और कहेंगे कि किसी पुराण में भी इसका संकेत आया है, किसी शास्त्र में भी। और विश्वविद्यालय से उन्हें डाक्टरेट की उपाधि भी मिल जाएगी। मैंने कहा—'किंतु हम लोग इंगलैण्ड में कहते हैं कि भारतवासियों को हम स्वराज्य के लिए शासन सिखला रहे हैं। ऐसी अवस्था में उन्हें पथभ्रष्ट करना कहां तक ठीक होगा?'

कर्नल साहब बोले कि कहने के लिए जो जब चाहे वह दो, फिर उसे बदल सकते हो। तुम जानते नहीं। यह हमारी जाति की विशेषता है। परिवर्तन जीवन है, स्थिरता मृत्यु। सरिता में जीवन है, पहाड़

की मृत्यु।

मैं तो पहाड़ के सम्बन्ध में पूछने गया था और विचारान्तर होने लगा।

मैं विषय बदलनेवाला ही था कि कैप्टन करेलो 'शार्लनियर' की भाँति गिरे हुए आए और बड़ी शोकप्रभा से बोले—'कर्नल साहब, मैं नष्ट हो गया।

कर्नल साहब ने कहा—'बात क्या है ?' करेलो साहब ने कुछ कहा नहीं केवल समाचार पर उँगली दिखाई। समाचारपत्र में २७ अप्रैल का तार कानपुर के संवाददाता का छपा था कि श्रीमती करेलो सत्रहवें मराठा रायफल्स नाम की पलटन के कप्तान शेपर्ड के साथ भाग गई।

कर्नल साहब ने कहा कि बात क्या है ? करेलो साहब ने कहा कि मैं शिकार के लिए चार दिनों से बाहर था। कल रात मैं देर से लौटा। सवेरे पत्नी के स्थान पर यह समाचार मिला। अब क्या करना चाहिए ?

कर्नल साहब बोले—'करना क्या चाहिए ? विवाह-विच्छेद की एक अर्जी कचहरी में देनी चाहिए। और दूसरे विवाह के लिए चेष्टा करनी चाहिए।'

मैंने कहा—'किन्तु यह तो जानना चाहिए कि कारण क्या है ? और क्यों कैप्टन शेपर्ड के साथ वह भागी। इस समाचार में कहाँ तक सचाई है, यह भी जानना आवश्यक है।'

कर्नल साहब ने कहा कि इसपर बेकार समय नष्ट करना है। स्त्रियों का भाग जाना ही स्वाभाविक है, घर में रहना ही अस्वाभाविक है। रह गई दूसरे विवाह की बात। कैप्टन करेलो, तुम्हारी क्या उम्र है ? कैप्टन ने कहा कि उन्तीस वर्ष, सात महीने, तीन दिन। कर्नल साहब बोले—'तुम तो कप्तान होने योग्य नहीं हो। मेरा जब विवाह हुआ तब मैंने पत्नी से कह दिया—देखो, यदि तुम मुझे छोड़ोगी तो मैं दूसरे ही दिन दूसरा विवाह कर लूँगा। और इससे कुछ मतलब नहीं कि किसने। यदि सौ स्त्रियाँ छोड़ेंगी तो [illegible] यह हुआ कि आज सैंतालीस [illegible] होने की बात नहीं आई।'

मैंने कहा—'इसीलिए मैंने विवाह नहीं किया।'

कर्नल ने कहा—'विवाह कोई बन्धन नहीं। हाँ भ्रम है।' और फिर खाली गिलास की ओर उन्होंने संकेत करके कहा कि इस अमुक बैरिस्टर के लिए। और बाद ही कचहरी में दाखिल कर दीजिए।

जब दोनों चले गए, मैंने कर्नल से कहा कि आपने सहानुभूति नहीं दिखाई। बड़ा रूखा बरताव दिखाया। उन्होंने कहा कि एक बार की बात हो तो सहानुभूति दिखा दूँ। अभी कितनी बार उनकी पत्नी आयेगी, कितनी बार विवाह-विच्छेद होगा, कहाँ से इतनी सहानुभूति लाऊँ? जैसे प्रति वर्ष या दूसरे वर्ष हम लोग अपनी कारें बदल देते हैं, सेना के अफसर अपनी पत्नियाँ बदलते हैं और उनकी पत्नियाँ अपने पति, यही मैं इतने दिनों की नौकरी में देखता चला आ रहा हूँ।

मैंने कहा—'अच्छा है। मैं अपना जीवन पत्नीरहित ही बिताऊँगा। देर हो रही है। मुझे आप यह बता दें कि मेरे स्वास्थ्य की दृष्टि से और मनोरंजन की दृष्टि से भी किस पहाड़ पर जाना उचित होगा?'

कर्नल साहब ने कहा—'मुझे पहाड़ों का विशेष अनुभव नहीं है। मैं तो दो-एक बार पहाड़ पर गया हूँ। गरमी के दिनों में दिन-भर खस की टट्टी में रहता हूँ। पंखा चला करता है और बरफ और व्हिस्की पीता रहता हूँ। परन्तु तुम्हारे लिए अभी यह ठीक नहीं होगा। तुम्हारे लिए शिमला, नैनीताल या मसूरी ठीक हो सकता है। डलहौजी अच्छी जगह है, किन्तु वहाँ मनोरंजन नहीं है। लैन्सडाउन भी ठीक है, किन्तु वह भी तुम्हें अच्छा नहीं लगेगा।'

मैंने कहा—'मैं वहाँ जाना चाहता हूँ जहाँ भारत के जीवन के अध्ययन करने का अवसर मिले। मैं धीरे-धीरे भारत की ओर आकृष्ट होने लगा हूँ।'

मसूरी की यात्रा

बहुत सोच-विचार के बाद मैंने यह निश्चय किया कि मसूरी चलूं। व्हीलर की दूकान से मसूरी के सम्बन्ध में तीन-चार पुस्तकें लाया। और सामान की तैयारी होने लगी। आज अप्रैल की बाईस तारीख को मैं मसूरी के लिए चला। स्टेशन पर मुझे एक मित्र पहुंचाने के लिए आए।

जिस डब्बे में मैं सवार हुआ, केवल दो व्यक्ति थे। एक मैं और एक और सज्जन थे। बहुत पतले न बहुत मोटे। अवस्था कोई चालीस साल। रंग आसमानी। एक बेंच पर लेटे हुए थे। ज्यों ही मैंने डब्बे में पांव रखा, घबड़ाकर उठ बैठे। कुछ सहमे, चकपकाए-से। परन्तु मैंने कुछ ध्यान नहीं दिया। मेरा सब सामान रखा जा रहा था। तब तक वह खिड़की के पास गए और गाड़ी चलते-चलते उन्होंने अपने नौकर को, जो नौकरोंवाली गाड़ी में बैठा था, बुला लिया।

गाड़ी चल पड़ी। वह मेरी ओर कभी-कभी देख लिया करते थे। नौकर से उन्होंने कहा—'हुक्का चढ़ाओ।' मेरी समझ में केवल 'चढ़ाओ' शब्द आया। मैंने समझा कि उनका अभिप्राय यह है कि मुझे ऊपरवाले बेंच पर चढ़ा दो। मैंने समझा, हो सकता है अपने से वहां चढ़ सकने में असमर्थ हैं। मैंने सोचा कि अवसर अच्छा है, इन्हें सहायता भी दूं—और परिचय भी हो जाए तो चौबीस घण्टे की यात्रा भी कट जाए।

परन्तु मैं यह नहीं जानता था कि वह अंग्रेज़ी जानते हैं कि नहीं। उर्दू बोलने में मुझे संकोच होता था, लाज भी लगती थी। न जाने कैसे हिन्दुस्तानी लोग फर्र-फर्र अंग्रेज़ी बोल लेते हैं। उन्हें कुछ लज्जा नहीं लगती। देखा कि उनके पास ही अंग्रेज़ी के समाचारपत्र रखे हैं, एक पुस्तक भी पड़ी है। मैं इतना तो समझ गया कि इन्हें अंग्रेज़ी आती है। मैंने अंग्रेज़ी में कहा—'यदि मेरी सहायता की आवश्यकता हो तो मैं तैयार हूं। मैं आपको ऊपर की बेंच पर चढ़ा सकने में सहायक हो सकता हूं।' उन्होंने मेरी ओर ऐसे देखा जैसे कुछ डर गए हों। और

कि मुह में छिपाने स्थान रख दी है। राजा साहब के कहने से मैंने मुह में एक मिठाई रखी। कुछ जीभ को सुख मिला। मेरी आँखों में आंसू भर गए थे। नाक से भी जल का संचार होने लगा था। राजा साहब के कई बार कहने पर मैंने फिर एक टुकड़ा दूसरी वस्तु में डुबोकर खाई। वह पहले से कम तेज थी। इस प्रकार से मैंने थोड़ी-थोड़ी सभी वस्तुएं चखीं।

भारतीय भोजन का अर्थ होता है—घी, मसाला और मिर्चे का उदारतापूर्वक व्यवहार। जान पड़ता है यहां यह वस्तुएं बहुत सस्ती मिलती हैं। एक बात और समझ में आई। ऐसे भोजन से जीभ बहुत पैनी हो जाती है। यही कारण जान पड़ता है कि भारतीय लोग बोलने में बड़े पटु होते हैं। बड़े-बड़े वक्ता यहां पाए जाते हैं।

और ऐसे ही भोजन का पूरक यहां की मिठाइयां होती हैं। दोनों सीमान्त पर पहुंच जाती हैं। मिठाइयों में मीठे की बहुतायत होती है। यदि कटु भोजन खाने से जी ऊब आए तो मिठाइयां खाइए, मिठाइयों से कुछ घबराहट हो तो भोजन कीजिए।

प्रकार और परिमाण भी बड़ी स्वादिष्ट बनाई जाती हैं। मेरा तो मन हुआ कि केवल दो वस्तुएं खाऊं। एक का नाम था हलुवा। वह आटे और घी और चीनी और केसर और संसार-भर के मेवे से बनाया जाता है। राजा साहब ने इसे बड़ी विधि से बनवाया था। हलुवा यद्यपि पेय नहीं है क्योंकि यह तरल नहीं होता है; इसे खाने में दांतों को परिश्रम नहीं करना पड़ता। और मुह में रखते ही धीरे-धीरे गले की ओर खिसकने लगता है। हम किसी यूरोपीय भोजन की सुगन्ध की इसकी सुगन्ध से तुलना नहीं कर सकते। इसमें एक गुण और है। खाते जाइए परन्तु जान नहीं पड़ता कि खाया है। जिसने इस भोजन का *आविष्कार किया होगा, वह बड़ा ही चतुर और बुद्धिमान व्यक्ति रहा* होगा। मुझे तो सबसे अधिक यही पसन्द आया और सभी भोजन छोड़कर दो प्लेट इसीको मैंने खाईं। जैसे पलासी का युद्ध बिना लड़े अंग्रेजों ने जीत लिया उसी प्रकार बिना जीभ हिलाए और दांतों को चलाए दो प्लेट हलुवा मेरे उदर में पहुंच गया। मांस इत्यादि

की प्राय: सभी प्लेटें रह गईं। अचार भी बड़े खट्टे हैं। उनके खाने के लिए भी विशेष साहस की आवश्यकता होती है।

जब भोजन कर चुका तब फलों की बारी आई। राजा साहब ने अपने बाग से आम मंगवाए थे। उन्होंने मुझसे वही खाने के लिए कहा। मैंने बहुत पहले सुन रखा था कि यहां का आम बहुत विख्यात और स्वादिष्ट फल होता है, परन्तु साक्षात्कार पहले-पहल हुआ। इसे छुरी से छीलकर खाते हैं। देखने में इसके टुकड़े सुनहले रंग के होते हैं। केले की भांति यह खाने में कोमल होता है। परन्तु स्वाद? कोई वस्तु ऐसी नहीं होती जिससे इसकी तुलना की जाए। मुझे कविता करने की शक्ति नहीं है इसलिए इसका गुण नहीं कह सकता। किंतु कुछ यों कह सकता हूं। जैसे कवियों में शेक्सपियर, सिपाहियों में नेपोलियन, अखबारों में टाइम्स और मछलियों में व्हेल होती है, इसी प्रकार आम सब फलों में बड़ा है![1] यदि भारत पर शासन करने के लिए और कोई कारण नहीं हो तो केवल आम के ही लिए हम लोगों को भारत पर शासन करना आवश्यक है। और जब स्वराज्य दिया जाए तब सब शर्तों के साथ यह भी एक शर्त रहे कि प्रत्येक फसल में यहां से दो जहाज आम इंगलैण्ड भेजा जाए।

मालिश

मसूरी में ढाई महीने राजा साहब के साथ रहा। यों तो भारत में जितने अंग्रेज रहते हैं सभी एक प्रकार से यहां के अतिथि हैं, किन्तु मैं तो सचमुच राजा साहब का अतिथि था। राजा साहब ने होटलों को आज्ञा दे रखी थी कि लपटट साहब से एक पैसा न लिया जाए। मेरा सारा बिल उन्होंने चुकाया और हम लोग साथ लौटे। मैंने छुट्टी तीन महीने की ले रखी थी। पंद्रह दिन पहले लौटने का कारण यह था कि राजा

साहब का आग्रह था कि उनके राज्य में मैं भी दस-पंद्रह दिन बिताऊं। मैं तैयार हो गया।

मसूरी में मेरा जी कुछ घबराने-सा लग गया था। वही नित्य का नाच और वही रात को शराब की बोतलें। कभी-कभी रिंक में स्केटिंग के लिए चला जाता था। किन्तु राजा साहब तो केवल नाच में ही सम्मिलित होते थे। और खेल-कूद से उन्हें विशेष प्रेम नहीं था। हां, ताश अवश्य खेल लिया करते थे।

राजा साहब के साथ रहते-रहते दो-तीन दोष मुझमें भी संपर्क से आ गए थे। राजा साहब में सबसे बुरी आदत थी नित्य स्नान करना। उनके स्नान करने की विधि भी विचित्र थी। कुछ तो साथ के कारण और कुछ इच्छा से, मैं भी नहाने लगा नित्य। राजा साहब की भांति तो मैं नहीं नहा सकता था, क्योंकि प्रति दिन के जीवन में मेरे लिए वैसा संभव नहीं था।

उनके नहाने की क्रिया इस प्रकार थी। सवेरे पैदल या घोड़े पर हम लोग घूमने जाते थे। वहां से लौटने पर जलपान होता था। जलपान में चाय, टोस्ट, अंडे, मिठाइयां इत्यादि होती थीं। इसके पश्चात् कमरे में एक तख्ते पर राजा साहब बैठ जाते थे और दो नौकर एक बोतल में सरसों का तेल लेकर उनकी दोनों ओर खड़े हो जाते थे। तेल हाथ में लेकर राजा साहब के शरीर पर डाल देते थे और राजा साहब का शरीर मला जाता था।

जिस समय यह क्रिया होती थी वह दर्शनीय था। राजा साहब को जान पड़ता था कि वह समय के बाहर हो गए हैं। अथवा उन्होंने समय को जीत लिया है। नौकर झूम-झूमकर उनके हाथ, पांव, पीठ और पेट हाथों से रगड़ते जाते थे। जैसे किसी मशीन में ठीक चलने के लिए तेल दिया जाता है, उसी भांति उनके शरीर में लगाया जाता था। आधा बोतल तेल सोखाया जाता था। डेढ़ घंटे तक यह कार्य होता था। इसके पश्चात् सिर में एक नौकर तेल लगाता था। यह तेल दूसरा था। जब एक नौकर सिर में तेल लगाता था तब दूसरा स्नान का प्रबन्ध करता था।

एक दिन मैंने राजा साहब से यह इच्छा प्रकट की कि केवल देखने के लिए मैं एक दिन तेल लगवाना चाहता हूं। उन्होंने बड़ी प्रसन्नता प्रकट की, मानो मैंने कोई बड़ा एहसान उनके ऊपर किया। उन्होंने अपने नौकर से कहा कि देखो, लफटंट साहब को अच्छी तरह तेल लगाओ। जीवन में पहली बार मुझे यह अनुभूति हुई। मैंने सब कपड़े उतार दिए। केवल निकर पहने हुए था। कमरा बन्द कर लिया गया और तेल लेकर दोनों नौकर खड़े हो गए। उस दिन कुछ ठंडक भी थी। तेल लेकर नौकरों ने मेरे शरीर को जोरों से रगड़ना आरम्भ किया। नौकरों के हाथ की रगड़ से मेरे शरीर के रोए टूटने लगे और मुझे ऐसा जान पड़ा कि किसी मिल के नीचे पीसा जा रहा हूं। तेल की यह महक भी विचित्र थी। मेरी आंखों से आंसू निकलने लगे। सारे शरीर का खून खाल में आ गया। मुझे ऐसा जान पड़ा कि खून शरीर के बाहर आने को उत्सुक है और मालिश करनेवाले उसे दबाकर शरीर के भीतर कर रहे हैं। जाड़े का तो नाम नहीं था। इसके उलटे यदि थरमामीटर लगाया गया होता तो कम से कम १०५ डिग्री तापमान इस समय होता। मैंने नौकरों से यह कार्य समाप्त करने के लिए कहा तो राजा साहब बोले—'अभी तो कुछ भी तेल शरीर में नहीं पिया, आश्चर्य तो यह है कि प्रत्येक मनुष्य के शरीर में प्रतिदिन एक पाव तेल सोखा दिया जाए तब जाकर कहीं स्वास्थ्य ठीक हो सकता है।' यदि सचमुच राजा साहब स्वयं इस सिद्धान्त का पालन करते रहे हैं तो इस समय उनका शरीर तेल का ही बना होगा। परन्तु जिस समय नौकरों ने मालिश बन्द कर दी ऐसा जान पड़ा कि मैं उड़ जाऊंगा। सरदी का नाम नहीं था और सारा शरीर हल्का जान पड़ता था। फूल की भांति हो गया था। उस समय जी होता था कि किसी बरफ की झील में कूद पड़ूं। नित्य कैसे लोग नहाते हैं, अब समझ में बात आ गई। हां, एक बात अवश्य थी कि सारे शरीर में पीड़ा हो रही थी। नौकरों ने इतने जोरों से सब शरीर रगड़ डाला था कि अगर कोई सेना का मेरे ऐसा आदमी न होकर साधारण मनुष्य होता तो वह सने हुए आटे की भांति हो गया होता।

दूसरे दिन, तीसरे दिन भी मैंने मालिश कराई और मुझे तो ऐसा

जान पड़ा कि मैं इसके बिना रह नहीं सकता, इसका प्रभाव यह भी हुआ कि मैं नित्य नहाने लगा और दोपहर में भी सोने लगा।

राजा का घर

पन्द्रह दिन अभी छुट्टी को बाकी थे कि राजा साहब घर लौटने के लिए तैयार हो गए। मुझसे कहा कि चलिए आप भी। मेरे घर के पास एक नदी है। वहां बहुत बड़े-बड़े घड़ियाल हैं और उसीके पास एक जंगल है जहां मृग बहुत-से पाए जाते हैं। शिकार का सुन्दर प्रबन्ध होगा। आपको कोई कष्ट नहीं होगा। पहले तो मेरा विचार नहीं था, किन्तु उनके बहुत कहने पर मैंने साथ जाना निश्चय किया।

बिहार में गया से सात मील पर एक स्थान पर राजा साहब रहते थे। बड़ा विशाल भवन था। सुन्दर सजा हुआ। उनके घर का थोड़ा-सा विवरण देना अनुचित न होगा। मैं जिस भाग में ठहराया गया उसीका ठीक विवरण दे सकता हूं क्योंकि मैंने देखा और राजा साहब से ही सुना कि जैसे सृष्टि के प्राणियों में दो विभाग होते हैं पुरुष तथा स्त्री, उसी प्रकार भारत में प्रत्येक घर भी दो भागों में विभाजित रहता है। पुरुष-भाग और स्त्री-भाग। स्त्री भाग में पुरुष नहीं रह सकते और पुरुष-भाग में स्त्री नहीं। स्त्री-घर में क्या विशेषताएं होती हैं, मैं कह नहीं सकता क्योंकि उसे देख नहीं सका—न इस जीवन में देखने का अवसर ही मिल सकता है। राजा साहब ने बहुत पूछने पर केवल यही कहा कि वहां स्वराज्य रहता है। जो चीज़ चाहे जहां रख दी जाए। जैसे वहां जाकर यदि आप बैठना चाहें, तो पहले कुरसी या खाट अच्छी तरह देख लेनी होगी क्योंकि दो-एक सूई कहीं पड़ी रह सकती है। बिछौने के नीचे पान का डब्बा पड़ा रह सकता है। मेज पर कलम-दवात के स्थान पर चूड़ियां रखी मिल सकती हैं। एक दिन पहले जो नया उपन्यास आया

होगा जिसे माप खोजते-खोजते थक भी गए होंगे उसे आप वहीं पाएंगे जिसपर बच्चे के दूधवाला कटोरा रखा होगा। घर के पुरुष-भाग की कोई वस्तु यदि न दिखाई दे तो पहले वहीं खोजनी चाहिए। राजा साहब कहने लगे कि एक बार माउजर की नई पिस्तौल मैंने मगवाई थी। तीन दिनों के पश्चात् वह घर में अगीठी के पास पाई गई। उससे आग हटाने का काम लिया जा रहा था। मैंने सोने-चांदी की सुरती की डिबिया एक बार मगवाई पेरिस की एक कम्पनी से। उसमें बच्चे की आंख का काजल रखा जाने लगा।

बाहर की रहने की जगह बड़ी भव्य तथा सुन्दर थी। इसके कहने की आवश्यकता ही क्या। जिस देश के पीछे ताजमहल की परम्परा हो वहां घर बनाने में सुन्दरता पर विशेष ध्यान दिया जाता होगा। किन्तु मुझे जो आश्चर्य हुआ वह घर के भीतर के भाग को देखकर, घर के बाहर के भाग को देखकर नहीं।

पहले मैं जिस कमरे में ठहराया गया उसका कुछ वर्णन कर दूं। धरती से लेकर भीत पर आधी दूर तक इटली की बहुत सुन्दर टाइल लगी थी जिसपर बढ़िया फरासीसी फूल और लताएं रंगों में बनी थीं। उसके ऊपर दीवार पर बेल्जियम के बने बड़े-बड़े दर्पण लगे हुए थे और छत पर जर्मनी के झाड़ लटक रहे थे। अफ्रीकी महोगनी की मसहरी और मेज और बर्मा की टीक के दरवाज़े थे। कमरे में एक बड़ा सुन्दर पियानो भी रखा था। मैंने राजा साहब से पूछा कि आप इसे बजाते हैं? उन्होंने कहा कि मैंने सीखने के लिए मगवाया था, किन्तु नौ साल से यह खोला नहीं गया। मैं सीख भी नहीं सका। मेज पर सुन्दर-सुन्दर लिखने-पढ़ने की सामग्री रखी थी, जो यूरोप के किसी देश का प्रतिनिधित्व करती थी। दरवाज़ों पर विलायती जालीदार तथा भीतर की ओर फ्रांस के मखमली परदे टंगे थे। ज़मीन पर ईरान की सुन्दर कालीन बिछी थी और उसके चारों ओर काश्मीर के सुन्दर रग बिछे हुए थे। इधर तो सब विदेशी ढंग का सामान था। उसीके पास देशी लोगों के बैठने का प्रबन्ध था। कमरा बहुत सुन्दर था। दीवारों पर तथा छत पर चित्रकारी थी। बैठने के लिए गद्दे बिछे थे और किनारे-

सोमवार की बात थी। मैं इतने दिनों ठहर नहीं सकता था। मैंने कहा—'मैं तो इतने दिनों ठहर नहीं सकता। चाहे जो हो, मैं तो लौट जाऊगा।' राजा साहब बड़े संकोच मे पड़े। उन्होंने ज्योतिषी से सब कठिनाइया बताईं और बोले—'कोई उपाय सोचिए।' ज्योतिषी ने कहा कि विशेष अवसरों के लिए तो शास्त्र ने कई विधिया बनाई हैं फिर उन्होने किसी भाषा में पन्द्रह मिनट तक कुछ कहा। पीछे पता लगा कि वह सस्कृत में अनेक ग्रथो के कुछ प्रमाण दे रहे थे। उसके पश्चात् उन्होने गद्य मे और साधारण भाषा मे समझाया कि आवश्यकता पड़ने पर सब नियम और शास्त्र बदले जा सकते हैं। मैंने कहा—'हा, साधारण कानून में तो ऐसा होता है। जैसे युद्ध के समय सरकार अपनी सुविधा के लिए सब कानूनों के ऊपर अलग से कानून बना लेती है। किन्तु यात्रा और धार्मिक बातों में नहीं कह सकता। यह सब तो महत्त्व की बातें हैं।'

पंडितजी से मैंने कहा कि ऐसी अवस्था में यदि आपकी धर्म-पुस्तकों मे व्यवस्था लिखी हो तो बताइए। राजा साहब ने भी कहा—'हा, पण्डितजी! शास्त्र तो आप लोग ही बनाते हैं, कुछ विचारिए।' मुझे क्या पता था कि शास्त्र बनानेवाले मेरे सामने बैठे हैं। मैंने जो कुछ पढ़ा था उससे मैंने अपने मन मे कल्पना कर रखी थी कि हिन्दू शास्त्र बनानेवाले जगलो मे रहते थे, बड़ी-बड़ी उनकी जटाएं रहती थीं, दो-दो फुट की दाढ़िया, और एक समय हवा पीते थे और एक समय पेड़ों की छाल खाते थे। किन्तु राजा साहब की बातों से पता चला कि शास्त्र बनानेवाले तो मेरे सामने ही बैठे हैं। मैंने जेब से कलम निकाल-कर उनसे बड़ी श्रद्धा से कहा कि मुझे यह देश बड़ा प्रिय है। छोटा-सा शास्त्र मेरे लिए आप बना दें तो बड़ी कृपा होगी। बस मेरी ओर ऐसी दृष्टि से देखने लगे मानो मैं निरा मूर्ख हू। राजा साहब ने कहा—'यह तो साइत देखते हैं, जन्मकुडली बनाते हैं, शास्त्र नहीं बनाते।'

मैंने कहा—'आपने ही कहा है अभी; इसीलिए मेरी इच्छा हुई कि अपने लिए एक शास्त्र बनवा लू।' राजा साहब ने कहा—'यह तो कहने की विधि है।'

मैंने कहा—'आप लोगों की कहने की विधि विचित्र होती है। कहा कुछ और अर्थ हो कुछ। अच्छा, शिकार के लिए चलने का निश्चय ाना चाहिए। यदि आपको अड़चनें हों तो मैं स्वयं जा सकता हूं। ो चिन्ता की बात नहीं है।'

राजा साहब ने कहा—'नहीं, ऐसा कभी नहीं हो सकता कि आप ले जाएं। आप मेरे मेहमान हैं। पंडितजी, कोई न कोई तरकीब नाल ही लेंगे।' फिर पण्डितजी से उन्होंने पूछा कि यदि मगर का शिकार न खेलने जाएं, शेर का शिकार खेलने जगल में चले जाएं ?

पण्डितजी ने कहा—'मैंने सोचा, तो प्रमाण भी है। एक चांदी का र दान दे दीजिए और वहां से लौटने पर होम करा दीजिए और रह ब्राह्मणों का भोजन करा दीजिएगा। सब ठीक हो जाएगा।' र हंसकर बोले—'यदि मगर की खाल में से एकाध टुकड़ा मुझे भी मिल ए तो आपके लड़के को एक जोड़ा जूता बन जाए।' मैंने कहा—'राजा हब के लड़के के जूते से आपका क्या मतलब ?' पण्डितजी ने कहा— ापका लड़का का अर्थ मेरा लड़का होता है। यह कहने की एक विधि ।' मैंने सोचा भारत में बातें करने की विचित्र-विचित्र विधियां हैं। हां की बातें समझने के लिए इन विधियों को सीखना होगा।

राजा साहब ने ज्योतिषी महोदय की बताई सलाह मान ली और शकार की तैयारी होने लगी। यह निश्चय हुआ कि दनुआ-भलुआ जगल में शेर के शिकार के लिए चलें और वहीं से मगर के शिकार के लिए भी चलें।

उनके मैनेजर महोदय आए; उन्हें आज्ञा दी गई। मोटरवाले ने ट्रोल भरना आरम्भ किया। एक लारी में भोजन इत्यादि की सामग्री रखी गई। राजा साहब ने मैनेजर साहब से पूछा—'कौन-कौन साथ चलेगा।' एक घण्टे तक इसपर विचार होता रहा। और उसी गंभीरता से जैसे दस नम्बर डाउनिंग गली में विलायत के कैबिनेट की बैठक होती है। कौन नौकर वहां कौन काम कर सकेगा? इसपर भी विचार हुआ और साथ-साथ उसके परिवार का इतिहास भी दुहराया गया।

प्रभाव नहीं पड़ता।

हम लोग मचान पर जाकर बैठ गए। अपनी अपनी राइफलें हम लोगों ने एक बार हाथ में लेकर देखीं। फिर हाथ में लेकर इधर-उधर निशाना साधा। मैंने कहा कि गोली मैं चलाऊँगा, राजा साहब! इसमें कोई आपत्ति आपको तो नहीं होगी? राजा साहब ने कहा कि नहीं, आप तो हमारे मेहमान हैं। हमने एक बार इसी स्थान के आस-पास शेर मारे हैं। मैंने कहा—'नहीं, कहने का अभिप्राय यह है कि आप एक बार भी गोली न चलाएँ। शेर पर जितनी गोलियाँ चलें, वह मेरी ही बन्दूक से।' राजा साहब ने कहा—'आप जैसे चाहें वैसे एक शेर मार लें। परन्तु यदि दो निकलें तो एक पर मैं गोली चलाऊँगा।' मुझे इसमें कोई आपत्ति नहीं थी।

मैंने कहा—'मैं तो, देखिए, ऐसी गोली चलाऊँगा कि खाल खराब न होने पाए। मेरा निशाना तो ऐसा सधा है कि यदि सामने शेर आया तो दो गोलियाँ लगातार उसकी आँखों में मारूँगा और वह वहीं ढेर हो जाएगा। हाँ, उसकी बगल सामने पड़ी तब कुछ कठिनाई होगी। परन्तु मैं दिमाग पर ऐसी तान के गोली लगाऊँगा कि फिर वह उठने का नाम नहीं लेगा।' मैंने यह भी बताया कि यह जो मेरी १६ बोर की राइफल है, वह सेना की नहीं है; यह राइफल उसमें की है जिसका जोड़ा ड्यूक आफ वेलिंगटन के पास थी।

अंधेरी रात थी। खेमा एक मील पर था। मशाल का प्रबन्ध इसलिए नहीं किया गया था कि शेर भाग जाएगे। टार्च हमारे पास थी, ग्यारह बजे के लगभग एकाएक ज़ोर से दहाड़ सुनाई दी। मैं उसके लिए तैयार नहीं था। एकाएक बिना सूचना के जो शेर गरजा तो मैं गोली चलाना भूल गया। मैंने सोचा था कि युद्ध की भांति पहले कुछ सूचना मिलेगी। परन्तु बिना नोटिस के शेर के गरजने से मैं सब भूल गया और मैं राजा साहब से एकदम लिपट गया जैसे केकड़ा पांव से लिपट जाता है और बोला—'राजा साहब, गोली आप ही चलाइए। खाल मुझे दे दीजिएगा।' राजा साहब ने कहा—'छोड़िए भी तो। जल्दी छोड़िए, नहीं तो शिकार गायब हो जाएगा।' दहाड़ एक बार ही के बाद बन्द

हो गई थी। मेरा मन कुछ ठीक हो चला था। मैंने कहा—'अच्छा, मैं ही चलाऊगा।' इधर-उधर देखा तो कही कुछ दिखाई नही दिया।

पीछे फिरकर हम लोगों ने देखा तो क्या देखता हू कि शेर कोई दो सौ गज पर चुपचाप खड़ा है। मैंने तुरत गोली दागी। वह हिला नही। राजा साहब से मैंने कहा कि देखिए एक ही गोली मे काम तमाम। राजा साहब ने कहा—'लेकिन अभी उछलेगा।' मैंने पाच गोलियाँ दनादन दाग ही तो दी। फिर कौन उठता है। मैं तो समझ ही चुका था कि पहली ही गोली मे यह जगल का राह छोडकर चला गया। मगर उसके निमित्त पाच गोलिया और सही। किन्तु रात में साहस नही हुआ कि मचान से उतरू। कुरसी पर वही सोए। बीच-बीच मे उठकर देख लेते थे। वह वही पडा रहा।

तीन बजे रात को एकाएक पानी बरसना आरम्भ हुआ। हम लोगो को विश्वास था कि शेर मर गया है। फिर भी डर था कि कही उतरने पर हमला न कर दे, यदि कुछ भी जान बाकी हो। टार्च फेंककर देखा तो अचल लम्बा-सा पड़ा है।

किसी भांति तड़का हुआ। हम लोग भीगते पड़े रहे। राइफल सभाली और डरते-डरते उतरे। इस समय जान पडा कि जिसपर छ: गोलिया मैंने वीरता से खर्च की वह जगली लकडी का एक कुन्दा था।

संगीत-लहरी

उस दिन सवेरे जान पडा कि काठ का उल्लू ही नही, काठ का शेर भी होता है। अपनी बुद्धिमानी की प्रशसा करते हुए हम लोग अपने कैंप मे लौटे। हमारे साथ ही साथ आकाश से पानी भी आया। पानी बरसने लगा। मुझे भारतवर्ष में आए सात महीने हुए थे। पुस्तकों मे पढ़ा था, मानसूनी पानी भारतवर्ष में बरसता है। परन्तु

जिनमें से तार नीचे तक लगे थे। बाजे को उसने अपने कंधे पर रखा
उसकी दूसरी ओर एक और आदमी बैठा। उसके सम्मुख दो बर्
रखे गए थे। यह बाजे मिट्टी के प्यालों के समान थे। केवल मुंह प
चमड़ा मढ़ा था जो चमड़े की पतली-पतली पट्टियों से कसा था
गानेवाले की तीसरी ओर एक व्यक्ति हारमोनियम लेकर बैठा।

मुझे यह अनुभव हुआ कि भारतीय बाजों में बड़ी कमी है। हार-
मोनियम की सहायता के बिना यह नहीं बज सकते, जैसे हम लोगों के
बिना भारत का शासन-प्रबन्ध नहीं हो सकता।

गानेवाला उंगलियों से तार बजाता था और दूसरा व्यक्ति एक
छोटी हथौड़ी लेकर, अपने बाजे को कभी ऊपर और कभी नीचे ठोकता
था। कभी हथौड़ी से ठोकता, कभी उंगली से। पीछे पूछने पर पता
चला कि यह लोग इस प्रकार बाजे मिलाते हैं। आध घण्टे तक सब लोग
बाजे मिलाते रहे। जान पड़ता है कि बाजे इतने बिगड़े थे कि मिलने में
इतनी देर लगी या इन लोगों को मिलाना आता ही नहीं था। नहीं तो
एक सेकेंड में मिल जाते।

इसके पश्चात् गाना आरम्भ हुआ। गानेवाले सज्जन मुंह खोलकर
'आ ओ ओ आ हो...' स्वर में चिल्लाते थे और हाथ से हवा में कभी आठ के,
कभी पांच के, कभी सात के अंक बनाते जाते थे। कभी हाथ से ऊपर से
नीचे हवा में लकीर खींचते थे। हारमोनियम से कुछ बजता जाता था
और दूसरे सज्जन ताल देते जाते थे। ताल देनेवाला शायद सो रहा
था क्योंकि बीच-बीच में उसका सिर झटके से नीचे गिर पड़ता था। फिर
वह अपना सिर उठा लेता था।

गानेवाला ऐसा मुंह बनाता था कि मैंने पहले समझा मुझे मुंह
चिढ़ा रहा है। परन्तु वह बराबर ऐसा करता जाता था। इससे जान
पड़ा कि भारतीय संगीत में मुंह बनाना आवश्यक है। गानेवाले के सिर
में कोई रोग था क्योंकि वह भी इधर-उधर हिल रहा था।

एक घण्टे तक उसने इसी प्रकार से गाया। लोग 'वाह-वाह' करने
लगे। मेरी समझ में कुछ आया नहीं। मैं मूर्ति की भांति बैठा रहा, मगर
लोग मुझे मूर्ख न समझें, इसलिए मैंने भी दो बार कहा—'वाह-वाह।'

पाच मिनट बाद उसने फिर प्रारम्भ किया। इस बार केवल 'ग्रा' नहीं था। उसने गाया, 'घेरि घन ग्राए'। भारतीय गाने ऐसे ही निरर्थक होते हैं। क्योंकि इसका अंग्रेजी अनुवाद होगा—'दि क्लाउड गैदर्ड'। इसका क्या सिर-पैर हो सकता है?

नर्तकियों की सेना

मेरे जाने का निश्चय हो गया और मैंने राजा साहब से कानपुर लौट जाने की आज्ञा मांगी। वर्षा भी जोरों पर होने लगी थी और छुट्टी भी समाप्त होने में चार-पाच दिन रह गए थे। राजा साहब को सुन्दर आतिथ्य के लिए मैंने बहुत धन्यवाद दिया। भारत के राजाओं के रहन-सहन, उनकी जीवन-चर्या, उनके आमोद-प्रमोद के सम्बन्ध में थोड़ी जानकारी भी हो गई थी। और मैंने सोचा कि इन्हीं नोटों के आधार पर एक पुस्तक लिखूगा इगलैण्ड लौटकर, क्योंकि साम्राज्य के लिए इससे बढ़कर और अधिक क्या सेवा हो सकती थी कि अपने राज्य का सूक्ष्म से सूक्ष्म ज्ञान प्राप्त हो सके।

राजा साहब ने मेरे जाने का दिन निश्चित किया और एक छोटी-सी पार्टी मेरी विदाई के उपलक्ष्य में दी और उन्होंने यह भी कहा कि आप को फिर अवसर मिले या नहीं, भारतीय नृत्य भी आप देख लें। हमारे नगर में भारत-विख्यात नर्तकियां हैं। आप उनका गाना सुनें और नृत्य अवश्य देखें।

पार्टी बहुत छोटी थी। केवल अंग्रेज अफसर थे, कुछ भारतीय और कुछ उनके मित्र। राजा साहब ने इस पार्टी में भोजन का तो प्रबन्ध जो किया सो किया ही, मदिरा का बड़ा अच्छा प्रबन्ध कर रखा था। परिमाण में भी बहुत थी और ऊचे दर्जे की भी थी।

पहले तो राजा साहब ने सबसे मेरा परिचय कराया इसके पश्चात

कार्यक्रम प्रारम्भ हुआ। जलपान शाम का था, यह बगल में
था। सब लोगों के ऊपर रंग-बिरंगी मदिरा का पान किया
साहब इतने मदिरा-प्रेमी थे कि जितने प्रकार से मदिरा
पान करते थे। मैं चूँकि रेस्त्रां में काम करता था, फिर भी
और अंग्रेज थे, उन्हें शराब पीते देखकर मैं दंग रह गया। दोनों
भी और गपशप मारते-मारते चली।

सन्ध्या हो गई, बिजली जगमगाने लगी और राजा साह
दोनों ने एक दूसरे बढ़े बनाने के करने की प्रशंसा की। दो
कुछ लोग राजा साहब की आज्ञा लेकर लौट गए। एक डिप्टीकल
को चार आदमी उठाकर कार पर बैठा गए क्योंकि उनमें स्व
की सामर्थ्य रह नहीं गई थी। मैंने राजा साहब से कहा कि य
तक यह इसी प्रकार से रहे तो कचहरी कैसे जाएँगे? उन्हें
इतनी देर तक नशा नहीं रहता। फिर यह तो रोज कचहरी
ही जाते हैं। जब यह नशे में रहते हैं तभी इन्हें होश रहता है
बड़ा आश्चर्य हुआ कि यह काम कैसे करते होंगे? मैंने राजा सा
कहा कि एक बात मेरी समझ में नहीं आई। हम लोग तो सैनि
रणक्षेत्र में तो मनुष्य जितना उन्मत्त रहे और जितनी अधिक
करे उतना ही वीर समझा जाता है। इसीलिए शराब में ही श
रहना वहाँ का धर्म है। किन्तु कचहरी-दरबार में मनुष्य को तो ऐसे
चाहिए कि बुद्धि ठीक रहे। राजा साहब बोले कि बुद्धि में क्या हो
है? और अफसरी करने में बुद्धि की विशेष आवश्यकता भी तो
है।

मैंने राजा साहब से पूछा—'अच्छा, यह तो बताइए, यहा
सामने मुकदमे भी तो आते होंगे। यदि यह नशे में रहते होंगे तो
अनुचित न कर देते होंगे?' राजा साहब बोले—'ये होश में
बेहोश, फैसला एक ही प्रकार होगा। और दूसरी बात यह है कि
आई०सी०एस० पास हैं। यह परीक्षा प्रतियोगिता द्वारा होती
उसमें उत्तीर्ण व्यक्ति भूल कैसे कर सकता है? फिर सरकार ने
नौकर रखा है। नौकरी के पश्चात् पेंशन भी मिलेगी। ऐसी अ

यद्यपि उनके ऊपर लोगों का भी प्रभाव पड़ेगा कि नहीं इसमें सन्देह है। हां, एक कठिनाई होगी। यदि भारत सरकार ने मेरा प्रस्ताव स्वीकार कर लिया तो पर्याप्त संख्या में वह मिल सकेगी कि नहीं। इसकी भर्ती इतनी सरलता से हो सकेगी कि नहीं, क्योंकि और संस्थों के लिए तो सरकार की ओर से कर्मचारी नियुक्त हो गए और इधर-उधर से लोग भर्ती हो जाते हैं। और सरकार उन्हें सिखाकर लड़ने के योग्य बना देती है। इन्हें तो प्राप्त करने में कठिनाई होगी क्योंकि राजा साहब कहते थे कि देश के धनी-मानी सज्जनों की छत्र-छाया में इनका शासन-शासन होता है। राज दरबार की यह सरकार है।

संभव है, जब हम उन्हें भर्ती करने लगें तब भारतीय नरेशों को बुरा लगे और कहें कि हम लोगों में और ब्रिटिश सरकार में जो संधियां हुई हैं उनमें इसके लिए कोई धारा नहीं है। फिर शीघ्र पार्लियामेंट को कोई नया विधान बनाना पड़ेगा।

यह गम्भीर बात थी और मैं इस सम्बन्ध में क्या कर सकता था? परन्तु बात महत्व की थी। और देशी नरेशों और यह धनी वर्ग से सम्बन्ध रखती है इसलिए उन्हें रुष्ट करना भी उचित नहीं था। क्योंकि राजा साहब से यह भी पता लगा कि बहुत-से लोग चन्दा इत्यादि तो दे देंगे, इन्हें देंगे कि नहीं ठीक नहीं कहा जा सकता।

जो हो, यह बहुत ही विचार करने की बात है और भारत सरकार को इसपर बड़ी गम्भीरता से विचार करना होगा। परन्तु मेरा प्रस्ताव बहुत ही मौलिक और व्यवहारात्मक और साम्राज्य की दृष्टि से लाभप्रद है।

मैं दूसरे दिन राजा साहब के यहां से विदा होकर कानपुर के लिए रवाना हो गया।

इधर जब से मैं लौटकर आया कोई विशेष घटना नहीं हुई र नित्य की दिनचर्या में ही लगा रहा। मौलवी साहब अब नहीं ते थे। उर्दू में मैंने साधारण योग्यता प्राप्त कर ली थी जिससे मेरा म अच्छी तरह चल जाता था।

यद्यपि मैं इतिहास का प्रेमी हूँ और साहित्य में अधिक रस नहीं ता, फिर भी कभी-कभी उर्दू कविता की पुस्तक मैं मगवा लिया ता था। मैंने उर्दू कविता को खूब अच्छी तरह समझ लिया था और तीन कविता पढ़कर इस परिणाम पर पहुचा कि और आगे पढ़ने की वश्यकता नहीं है।

बुलबुल और गुलाब, बिसमिल अर्थात् जो अधमरा हो और कातिल, ला और महमिल, मूसा और तूर पहाड़ का प्रकाश, घोंसला और जली, कैदखाना और प्याला और शराब—इतनी बातें आप जान इए फिर उर्दू कविता के सम्बन्ध मे जानने की और कोई आवश्यकता ही है। इसमे बिसमिल तो मैं ही कितनो को किरचकर मैसोपोटामिया बना चुका था। उसमे कितने मरे भी होगे, इसलिए कातिल की दवी भी मुझे मिल सकती है। लैला को मैंने देखा नहीं। महमिल अरब के मैदान में कई ऊँटों पर मैंने देखा। शराब और प्याला तो दिन-रात साथ ही रहते थे, बुलबुल नही देखी, कभी अवसर मिला तो खूगा।

इधर पता लगा कि इस प्रात मे एक और भाषा है जिसे हिन्दी हते हैं। इसे वह लोग पढ़ते हैं जो मुसलमान नहीं हैं। इस देश मे ही दो मुख्य जातिया हैं उनकी सभी बातें अलग-अलग हैं।

स्टेशनो पर तो देखने में आता था कि साइन बोर्ड पर लिखा था कि यह हिन्दू के लिए भोजन है, यह मुसलमान के लिए। मुझे कभी उनमें भोजन के लिए जाने का अवसर नहीं मिला। एक दिन इस मामले में मैं मूर्ख भी बन गया।

एक दिन अपने बेयरा से मैंने पूछा कि यहां कहीं निकट खेत हैं?

उसने कहा कि यहां तो नहीं यहां से पांच मील पश्चिम में है। वे आस-पास के जमींदार भी यहां हैं। मैंने कहा—'एक दिन आऊंगा।' रविवार के दिन उस गांव में कार से पहुंचा। गांव में बड़ी हलचल मची। मैंने जमींदार साहब से कहा कि मैं रिसर्च करने आया हूं। आपके यहां खेती होती है? उन्होंने कहा—'हां।' मैंने कहा—'यदि आप कष्ट करें तो मैं खेत पर आपके साथ चलूं।'

हम लोग साथ-साथ चले। मैंने पूछा—'आप तो मुसलमान हैं?' वह बोले—'हां,' फिर मैंने पूछा—'यह फसल किस चीज की है?' वह बोले—'धान की' मैंने कहा—'आप तो सभी धान बोते होंगे?'

जमींदार साहब ने कहा—'धान की तो बहुत-सी किस्में हैं। फिर भी दो-तीन तो बोता ही हूं।' मैंने कहा—'मुझे जरा मुस्लिम धान और हिन्दू धान के खेतों में से चलिए, मैं यही देखने के लिए यहां तक आया हूं।'

वह मेरी ओर बड़ी देर तक देखते रहे। फिर उन्होंने न जाने क्या मेरे चेहरे से पढ़ा। उसने कहा—'हुजूर, इस समय चलें फिर कभी आएंगे।' मेरी समझ में बात नहीं आई। मैंने कहा—'आप नहीं आएंगे तो मैं ही जाऊंगा।' वह और भी घबड़ाया। उसने कहा—'आप सचमुच क्या चाहते हैं?' मुझे क्रोध आया। मैंने कहा—'देखना क्या, मुझे हिन्दू और मुसलमान दोनों धान दिखाइए।' उसने कहा कि धान में तो कोई ऐसी चीज नहीं होती। मुझे आश्चर्य हुआ। मैंने पूछा—'और गेहूं में?' उसने कहा कि किसी अनाज में ऐसा भेद नहीं होता। मुझे उस पर विश्वास नहीं हुआ। मैंने कर्नल साहब से पूछा। वह मुझपर बहुत हंसे। बोले—'अनाज नहीं हिन्दू मुसलमान होता। पकने पर वह जो पकाए उस जाति का हो जाता है।'

मैंने कहा—'तो भाषा भी एक ही होगी। हिन्दू बोले, तो हिन्दी और मुसलमान बोले, तो उर्दू। कर्नल साहब ने कहा कि बात तो कुछ ऐसी ही है। थोड़ा दायें-बायें का बस अन्तर है। मैंने पूछा कि वह क्या है? उन्होंने कहा कि जैसे अंग्रेजी लिखी जाती है बायें से दायें वह तो और दायें से बायें उसीको लिख दीजिए अरबी अक्षरों में उर्दू।

मैंने कहा—'तब तो बहुत कम अंतर है। यह लोग मिलकर तय
ो नहीं कर लेते कि एक ही ओर से एक ही अक्षर मे लिखें। इससे
ो अनेक कामो में बडी आसानी हो सकती है।' कर्नल साहब ने घुमा
कते हुए कहा—'यदि तुम्हारे विचार के कुछ लोग यहा आ जाए तो
्रिटिश साम्राज्य की जड उखड जाए। क्या चाहते हो तुम कि
ारतवासी एक हो जाएं?' मैंने कहा कि इससे एकता और अनेकता में
्या बाधा अथवा लाभ हो सकता है? यह तो पढने-लिखने की बाते
है।

कर्नल साहब ने कहा—'तुम अभी नहीं जानते। केवल भाषा के
्रश्न पर यहा के लोग एक हजार वर्ष तक लड सकते हैं।'

मैंने कर्नल साहब से कहा कि जो हो, मैं हिन्दी भी थोडी पढ़ना
चाहता हू। जैसे उर्दू के लिए मौलवी का आपने प्रबन्ध करा दिया था
उसी भांति इसका भी प्रबन्ध कर दें तो बड़ी कृपा होगी। एक पण्डित
तीन-चार दिनों के बाद आए। उनके माथे पर उजली और लाल कई
रेखाएं बनी थीं। पता चला कि वह एक स्कूल में हिन्दी और संस्कृत
पढ़ाते हैं। मैंने अपना मत उनपर प्रकट किया कि मैं थोड़ी हिन्दी जान
लेना चाहता हूं। पहला वाक्य जो उन्होंने कहा वह मैंने तुरन्त ही उनके
जाने के बाद लिख लिया—क्योंकि यह मेरे लिए एक नई बात थी।
उन्होंने कहा—'जो है सो हिन्दी भाषा पढ़ने मे अपना जो है सो समय
क्यों जो है सो बरबाद करते हैं। जो है सो संस्कृत पढिए। तब
जो है सो आपको यहां का हाल जान पडेगा जो है सो।'

पहले मैंने समझा, आधी हिन्दी 'जो है सो' से बनी है। तब तो मुझे
बड़ी जल्दी आ जाएगी। दूसरे मैंने सोचा, मैं भी हिन्दी बोलू। मैंने
पण्डितजी से कहा—'जो है सो मुझसे पैसे लेकर जो है सो एक अच्छी
किताब जो है सो बाजार से खरीद दीजिए जो है सो।'

पण्डितजी मुझपर बहुत रुष्ट हो गए। बोले—'आप मुझे चिढ़ाते
हैं? गुरु को चिढ़ाने से कभी विद्या नहीं आ सकती।' पीछे पता चला
कि यह हिन्दी की विशेषता नहीं, बल्कि यह एक ठेका है।

अंग्रेजी संस्कृति

पण्डितजी मुझे हिन्दी पढ़ाने आने लगे और मैंने भी हिन्दी प
प्रारम्भ कर दी। दो सप्ताह में मैं हिन्दी पढ़ने लगा। पण्डितजी मु
थोड़ी दूर पर कुरसी पर बैठते थे। पण्डितजी में एक बात वि
थी, परन्तु बड़ी अच्छी थी। अपने मन की बात साफ कह देते थे

उन्होंने कहा कि यहां से पढ़ाने के बाद मैं घर जाकर नहाता हूं।
मैंने जब पूछा कि ऐसा क्यों करते हैं? तब उन्होंने कहा कि आप लो
मांस-मछली-मदिरा का सेवन करते हैं और बहुत-सी ऐसी वस्तुएं ख
हैं जो नहीं खानी चाहिए। मैंने उनसे पूछा—'यदि उन्हें छोड़ दूं तब म
मुझे छू सकेंगे कि नहीं?' इसका उन्होंने कोई उत्तर नहीं दिया।

छः महीने में अच्छी हिन्दी आ गई। मैंने 'चन्द्रकान्ता', 'दानलीला'
'एक रात में बीस खून', 'सावन का खिलौना' आदि क्लासिकल पुस्तकें प
डालीं। तब मैंने पण्डितजी से पूछा कि हिन्दी में सबसे महत्त्व की पुस्त
जो हो वह बताइए। अब मैं वहीं पढूंगा। पण्डितजी ने कहा कि य
तो बहुत पोथियां हैं किन्तु दो ही सुगम ग्रंथ हिन्दी में हैं—'रामायण'
और 'सूरसागर'।

मैंने पहले सूरसागर पढ़ा। सूरसागर के दो अर्थ होते हैं। या तो
बहादुर समुद्र या बहादुरों का समुद्र। जान पड़ता है यह किसी अंग्रेज
की लिखी पुस्तक है क्योंकि अंग्रेज जाति से अधिक सागरों का प्रेमी कोई
और जाति नहीं हुई है। मैंने समझा था कि इसमें हमारे यहां के वीरों का
वर्णन होगा जो पहले समुद्र के जहाजों पर छापा मारा करते थे। इस
पुस्तक में ग्वाल शब्द आया है यह असल में 'गॉल' शब्द है। यह फ्रांस
के निवासी थे। भारतवासियों ने इसी शब्द को बिगाड़कर ग्वाल
बना दिया है। ग्वाल-बाल तो कई स्थानों पर आया है। स्पष्ट है कि उन
दिनों बाल नृत्य की प्रथा बहुत जोरों पर थी।

कृष्ण शब्द तो स्पष्ट ही क्राइस्ट शब्द से बिगड़कर बना है। उस
कवि ने क्राइस्ट की कहानी का दूसरा रूप ही दिया है। यह इधर
भारत में आकर और भी बिगड़ गया है। गलिली के झील के स्थान

पर यमुना नदी कर दी गई है। और उसके चमत्कारों को भी दूसरे ढंग से वर्णन किया गया है। एक देश की कहानी दूसरे देश में इसी प्रकार बदल जाती है। मैं इस पुस्तक पर एक बड़ा ग्रंथ लिखने का विचार कर रहा हूँ।

राजनीतिक विजय के पहले इंगलैण्ड ने भारत का सांस्कृतिक विजय कर लिया था। यह इस पुस्तक से सिद्ध होता है।

दूसरी पुस्तक रामायण तो स्पष्ट ही होमर की पुस्तक का भावानुवाद है। अनुवाद अच्छा नहीं हुआ है। लिसिडास नाम का कोई अनुवादक था। उसीका नाम बिगड़कर तुलसीदास हो गया। हेलेन के स्थान पर सीता नाम रखा गया। ट्राय का युद्ध ही राम-रावण का युद्ध लिखा गया है। दो और बातें हो सकती हैं। रामायण के राम वही रोमन हैं जिसने रोम नगर की नींव डाली हो। या मिस्र के राजा रमेसिस हों। इन विषयों पर अवकाश मिलने पर छान-बीन करूंगा।

हनुमान तो स्पष्ट ही जर्मन नाम है। उन्हीके वंश में एक और हनुमान हुए हैं जिन्होंने होमियोपैथिक दवा का आविष्कार किया था।

यह लोग यूरोपीय थे, इसका एक और प्रमाण यह है कि अनेक नगर यूरोप में इन्हीं लोगों के नाम पर बसे हैं। राम के नाम पर रोम, रावण के नाम पर फ्रांस में रोयां, लक्ष्मण के नाम पर लक्षमबुर्ग इत्यादि। इन सब बातों से पता चलता है कि सारे संसार में सभ्यता फैलानेवाले यूरोपियन थे। इन्हीं लोगों ने सबको शिक्षा दी है और इन्हीं लोगों के पंथ किसी न किसी रूप में प्रचलित हैं।

मुझे हिन्दी पढ़ने से बड़ा लाभ हुआ। संसार में उसी विचार द्वारा एकता फैलाई जा सकती है जिसका नेतृत्व यूरोप करेगा। किन्तु जब तक संसार के सारे देशों को यूरोपवासी विजय न कर लें ऐसा करने में कठिनाई होगी।

मुझे पछतावा होने लगा कि मैंने हिन्दी पहले क्यों नहीं पढ़ी। इससे यूरोपियन संस्कृति के विस्तार का मुझे बड़ा ज्ञान हो गया। मैं और

जब भाषा की सीमा को यह दोनो विद्वान पार कर चुके थे अ
इस्लाम तथा हिन्दूधर्म पर विवाद होने लगा था। और वह व्यक्ति
आचार-व्यवहार, शरीर-स्वास्थ्य तक आ गया। मैं कह नहीं सकत
किन्तु मैं न होता तो मेरा कमरा अखाड़ा का स्वरूप धारण करता
मैंने मन मे सोचा कि जब एक हिन्दू तथा मुसलमान इतने स्वाभिमान
हैं कि यदि अंग्रेज उनके बीच न हो तो अपनी शक्ति की परीक्षा लेने
लिए तत्पर रहते हैं, तब जहा करोड़ों हिन्दू और मुसलमान रहते है
वहा यदि उनके बीच कोई अंग्रेज न हो तो कैसे यह लोग रहेंगे। मैं
किसी भाति उन्हें शान्त किया और वे लोग यहां से एक उत्तर औ
एक दक्षिण की ओर चले। उनकी दृढ़ता की मैं प्रशसा करने लगा कि
एक सड़क पर भी दोनो साथ नही चले।

पण्डितजी तो बराबर आते ही थे। अब मुझे एक ऐसे विद्वान की
खोज हुई जो पण्डितजी से अधिक योग्य हो। मैंने स्थानीय अंग्रेजी पत्र
मे विज्ञापन दे दिया। मैंने सोचा कि कानपुर मे दो-एक सज्जन मिल
ही जाएगे क्योंकि कानपुर मे कई कालेज भी हैं। यद्यपि कुलियों की
आबादी यहां अधिक है, फिर भी हिन्दी के विद्वान, जिन्होंने आलोचनात्मक
ढंग से अध्ययन किया हो, मिल ही जाएगे।

पाच-छ: दिनो के बाद एक दिन सन्ध्या समय मैं परेड से लौटा तो
मेरी मेज पर एक गट्ठर पत्रो का रखा था। मुझे सन्देह हुआ कि डाकिया
अपना बण्डल भूल गया है। मैंने बेयरा से पूछा तो उसने कहा कि हुजूर
यह सब पत्र आपके हैं।

मेरे पास दो-एक पत्र प्रतिदिन आते थे। इतने पत्र कहां से आ
गए ? मैंने उनमें से एक देखा तो ज्ञात हुआ मैंने जो विज्ञापन दे रखा
था, उसीका आवेदन-पत्र था। एक-दो-तीन, सब वही। कुछ इधर-
उधर देखा। कानपुर ही नहीं, लखनऊ, बनारस, दिल्ली सब स्थानो से
आवेदन-पत्र मिले। मैं घबरा गया। बेयरा को दिया कि इससे चाय
बनाना। मुझे इससे यह पता चला कि भारतवर्ष में हिन्दी के विद्वानों
की संख्या अनन्त है। उस ढेर में से मैंने यों ही कानपुर के एक व्यक्ति का
पत्र उठा लिया और उन्हें पत्र लिख दिया। वह सज्जन मिले। वह

युवक थे, कवि भी थे, हिन्दी के विद्वान भी थे और वातचीत से उनमे तन्मयता पाई जाती थी। मुझे मिलकर प्रसन्नता हुई। कानपुर के एक कालेज मे वह हिन्दी पढ़ाते थे। उन्होंने हिन्दी के विषय में बहुत-सी बातें मुझे बताई और सबसे बडी बात तो यह थी कि मुझे प्रतिदिन अपनी रचना सुनाते थे।

कविता कैसी थी, यह जानने की मुझमें क्षमता न थी, पर उनका गला सुरीला था और याद भी उन्हे खूब था।

उनके कालेज मे एक दिन कवि-सम्मेलन था। मुझे बड़े आग्रह से वह यहा ले गए।

मैं एक बार उर्दू के कवियो के कविता-पाठ मे गया था। वह मैं कही लिख चुका हूं। हिन्दी का कवि-सम्मेलन भी कुछ-कुछ वैसा ही होता है।

मैं तो यो भी उत्सुक था। प्रोफेसर साहब के कहने से और भी तैयार हो गया और चला। सात बजे का समय था। आठ बजे प्रोफेसर साहब मेरे यहा आए। साढ़े आठ बजे वहा पहुंचे। भीड़ काफी एकत्र हो गई थी, परन्तु सभापति महोदय नहीं थे। सभापति महोदय बनारस से आए थे। मैंने प्रोफेसर साहब से पूछा कि यदि वह न आए हों तो दूसरे को बैठाकर आरम्भ कीजिए। उन्होंने कहा कि नहीं, वे आ गए हैं। अभी सन्ध्या को उनकी गाड़ी आई है। उनकी भाग पीसी जा रही है। छान लें, तो आएं।

कवि-सम्मेलन

मैने पण्डितजी से पूछा कि भाग क्या वस्तु है? उन्होंने बताया कि भांग एक पत्ती होती है। उसे पीसकर हिन्दू लोग पीते हैं। इसके पीने से यह लाभ होता है कि जो एक बोतल जानीवाकर नही कर सकता,

कवियों के लिए अब और कुछ रहा नहीं।

जब लोगों ने बोलना प्रारम्भ किया तब इन कवियों ने पढ़ना बन्द किया। मैं भी बाहर निकला। कवि लोग जलपान के लिए एक कमरे में जा रहे थे।

बाहर निकला तो मन्त्री महोदय को तीन-चार कवि घेरे हुए थे। एक कह रहा था—'मगर मैं [illegible] बनारस से आया हूं', एक कह रहा था, 'इक्यावन नहीं तो इकतीस मिलना ही चाहिए, मेरा और कोई व्यवसाय नहीं है।' एक ने मन्त्री महोदय का हाथ पकड़ लिया और बोला—'आप जानते हैं मैं प्रोफेसर हूं। कई पुस्तकों का प्रणेता हूं। मैं पहले बिना लिए जाता नहीं, आप एक सौ एक मुझे दे दीजिए।' मेरी समझ में नहीं आया कि यह क्या बात है।

पण्डितजी ने मुझे समझाया कि हिन्दी कविता का बहुत मूल्य होता है। यह मुफ्त नहीं सुनाई जाती। जिस साहित्य का कोई मूल्य नहीं, वह भी कोई साहित्य है।

टक्कर

मुझे भारत में आए दो साल से ऊपर हो गए, किन्तु आज जिस घटना का विवरण मैं अंकित कर रहा हूं वह बड़ी ही विचित्र है। यों तो भारतवर्ष में कुछ भी विचित्र हो नहीं सकता। सारे संसार में सात विचित्रताएं हैं, किन्तु अकेले भारत में सात हजार विचित्रताएं मिलेंगी। यहां का प्रत्येक व्यक्ति विचित्र है, सबकी बात विचित्र है, सब प्रथाएं विचित्र हैं। और हम लोग इंगलैंड से आकर यहां विचित्र हो जाते हैं।

एक रात क्लब से मैं तथा कैप्टन ब्रॉसहेड कार पर चले आ रहे थे। उस दिन कर्नल डूनथिंग से बाजी लगी थी, वह हार गए। और उन्हें चार बोतल ह्विस्की पिलानी पड़ी। उनमें से तीन बोतल कैप्टन

ऑसहेड पी गए। सैनिक अफसर अपनी बुद्धि सदा रिजर्व में रखते हैं। यदि सदा यों ही व्यय किया करें तो रणक्षेत्र मे कैसे कौशल दिखा सकते हैं। इसलिए मस्तिष्क के एक सुरक्षित कोने में वह बुद्धि रखते हैं और जब उनके रक्त मे वह तरल पदार्थ मिल जाता है जिसे साधारण जनता 'मदिरा' के नाम से पुकारती है, किन्तु शिष्ट समाज जिसे अंगूर का रस कहता है, तब तो बुद्धि उसीमें डूब जाती है। यही हाल कैप्टेन ऑसहेड का हुआ, कार का संभालना उन्हीके हाथों में था। उनके रुधिर की गति, कार की गति एक ही थी। एक मोड के पास एक ओर से एक तांगा आ रहा था। हमारी कार ने उसके पहिये के साथ टक्कर ली। सईस और सवार दोनों साथ देने पर तुले थे, दोनों गिरे! घोड़ा समझदार था, वह तांगा लेकर भागा। कार का इंजन बन्द हो गया।

मुझे पहले पता नहीं था कि टक्कर होश में लाने की एक दवा भी है। कैप्टन साहब को होश आ गया। वह कार से उतर पड़े, मैं भी उतर पड़ा। यह देखने के लिए कि बात क्या है। कार के पास दो व्यक्ति सड़क पर लेटे हुए थे। कार मे कुछ विशेष बिगड़ा नहीं था। ठीक हो गई। मैंने कहा—'इन्हें अस्पताल ले चलना चाहिए।' कप्तान साहब बोले—'तुम भी अंग्रेज होकर डरते हो। अंग्रेज तो वीर जाति होती है जो युद्ध में सेना की सेना सफाया कर देती है, वह दो आदमियों की मृत्यु से डर जाए, यह कैसी वीरता है!' मैंने कहा—'ठीक है। भारतवासी भी वीर होते हैं। मरने से डरते ही नहीं। मरने के लिए ही पैदा हुए हुए हैं।' ऑसहेड ने पूछा—'तुम्हें यहां आए कितने दिन हो गए?' मैंने कहा—'दो साल के लगभग।' उन्होंने कहा—'तभी तुम यह भी नहीं जानते कि भारतवासी प्लेग, कालरा और टाइफस में कितने मरते हैं।' मैंने कहा कि इसके अध्ययन करने की मुझे कोई आवश्यकता नहीं पड़ी, किन्तु यदि इंगलैंड मे ऐसी घटना होती तो आप क्या करते। ऑसहेड बोले—'अंग्रेज जाति के जीवन की रक्षा अति आवश्यक है क्योंकि उसीके द्वारा संसार में सभ्यता का प्रसार होगा और हो रहा है और संसार की व्यवस्था को ठीक अंग्रेज ही कर सकते हैं। उनकी

काम कराना होगा तब उसका प्रभाव तुम्हारे बैंच पर पड़ेगा और हिन्दुस्तानी मजिस्ट्रेट हिन्दुस्तानियों के लिए जो भी हो अंग्रेज़ों के एक पत्र से उसपर सफलता मिल सकती है। एक अंग्रेज़ के पत्र का हिन्दुस्तानी अफसर पर वही प्रभाव पड़ता है जैसा तोप का किले पर। खैर, देखा जाएगा'

मुझे ऑसहेड ने गवाही में रख दिया। हम लोग निश्चित दिन कुछ देर से अदालत पहुंचे। देखा तो वहां बड़ी भीड़ थी। अनेक मुसलमान सज्जन जिनकी संख्या चार-पांच सौ से कम न होगी एकत्र थे। मैंने समझा कोई बात होगी। ऑसहेड के वकील एक मुंशीजी थे। काली लम्बी अचकन थी, लम्बा-चौड़ा पायजामा था। पांव के जूते से जान पड़ता था कि जब से मोल लिया गया कभी पालिश नहीं हुई। सिर पर टोपी न थी। नाक पर चश्मा था। सुना था कि बड़े नामी वकील हैं।

मैंने वकील साहब से पूछा कि आज कोई बड़ा संगीन मुकदमा है क्या? इतनी भीड़ एकत्र है। वकील साहब ने कहा—'नहीं, यह उसी मुसलमान की ओर से आए हैं।' मैंने पूछा—'यह लोग क्या करेंगे?' वकील ने कहा कि यह लोग रुपये-पैसे से और जो कुछ सहायता कर सकेंगे करेंगे और यह भी तो उस व्यक्ति को जानना चाहिए कि मेरे साथ इतने आदमी हैं।

मैंने पूछा कि फिर उस हिन्दू के साथ इसके तिगुने होंगे क्योंकि उनकी आबादी तो यहां कई गुनी अधिक है। वकील साहब ने कहा कि हिन्दू जाति वीर जाति है। वह चाहती है कि सब लोग अपने पांव पर खड़े हों। सहायता लेने से लोग दुर्बल हो जाते हैं और एक-दूसरे के आश्रित हो जाते हैं। इस प्रकार दूसरे की सहायता लेकर वह अपने पैर में कुल्हाड़ी नहीं मारना चाहते। वह तो यदि पैसेवाला न होगा तो उसे वकील भी मिलेगा कि नहीं इसमें सन्देह है।

कोई ऐसा स्थान नहीं था जहां हम लोग बैठ सकें। समन में लिखा था—'दस बजे आना।' हम लोग ग्यारह बजे पहुंचे। फिर भी मजिस्ट्रेट साहब का पता नहीं था। मैं तो यों ही साथ में गया था। कोई विशेष काम न था। गवाही जिस दिन होती उस दिन जाता।

तु केवल यहां का रंग-ढंग देखने के लिए आ गया था।

दो बजे मजिस्ट्रेट महोदय पधारे। जैसे रसायनशास्त्र, दर्शन आदि शब्दों के अर्थ साधारण बोली के अर्थ से भिन्न होते हैं, उसी भांति तीय कचहरी की भाषा में दस का अर्थ दो होता है। परन्तु तब भी हट नहीं हुई। वकील साहब ने ऑसहेड से कहा कि यदि आप एक या खर्च करें तो मैं पेशकार को देकर पहले आपको पुकरवा लूं; दी छुट्टी मिल जाएगी। अब मैंने समझा कि सचमुच समय का य होता है। ऑसहेड ने कहा कि मैं जो कुछ नियमित व्यय होगा सेे अधिक देने के लिए तैयार नहीं हूं। परिणाम यह हुआ कि चार ते लोग बुलाए गए। और न जाने क्या दो-एक वकील साहब से बात ई और फिर यह हुआ कि बीस दिन बाद तारीख पड़ी और ऑसहेड होदय और मैं लौट आए।

दूसरी तारीख पर मैं नहीं गया। ऑसहेड साहब चाय इत्यादि कर साढ़े तीन बजे वहां पहुंचे तो पता चला कि मजिस्ट्रेट महोदय किसी गांव में गए हैं क्योंकि वहां ईख के खेत में टिड्डियों का एक बड़ा रोह आक्रमण कर गया। उस दिन भी वह चुपचाप लौट आए। तीसरी तारीख पर फिर मजिस्ट्रेट साहब नहीं थे। उनकी साली ने पने पति को तलाक दिया था। उसी मुकदमे में वह गवाह थे; इलाहाबाद चले गए थे। चौथी तारीख को कानपुर के ही एक मेले में उनकी तैनाती थी। उस दिन भी मुकदमा पेश नहीं हुआ। पांचवीं तारीख को ऑसहेड तुरन्त लौट आए। और सीधे मेरे पास आए।

मैंने पूछा—'आज बड़ी जल्दी लौट आए?' उसने कहा कि आज ईद की छुट्टी है। कचहरी बन्द है। मैंने कहा कि छुट्टी के दिन कैसे तारीख डाल दी; क्या मजिस्ट्रेट के पास डायरी नहीं रहती? तब पता चला कि कुछ ऐसे त्योहार होते हैं जिनके लिए कुछ निश्चय नहीं रहता कि कब होंगे। चन्द्रमा के उदय तथा अस्त होने पर यह त्योहार पड़ते हैं। चन्द्रमा ऐसी मादकता में पड़ा रहता है कि कभी-कभी वह भूल जाता है कि हमें आज उदय होना है। हिन्दू शास्त्रों के अनुसार चन्द्रमा शराब का भाई है, इसलिए मादकता स्वाभाविक है। इसलिए पता नहीं था

कि आज छुट्टी है।

अब की बार ऑसहेड ने कर्नल साहब को लिखा। उन्होंने कमिश्नर को लिखा कि हमारे अफसरों को बड़ा कष्ट होता है। बार-बार आने से अनेक कामों का हर्ज भी होता है, यद्यपि काम के विचार से इन लोगों को जितना अवकाश था उतना मरने पर भी लोगों को नहीं होगा। इस पत्र का परिणाम यह हुआ कि छठी तारीख पर मुकदमा एक-दूसरे मजिस्ट्रेट की कचहरी में भेज दिया गया। सम्भवतः इन्हें कोई और काम नहीं था, केवल मुकदमे के लिए ही यह मजिस्ट्रेट बनाए गए थे।

पेशी

इस बार जब मुकदमा पेश हुआ, मैं भी गया क्योंकि इस बार ऐसी आशा थी और ठीक थी कि सुनवाई होगी। अब तक वह दोनों अच्छे हो गए थे।

मजिस्ट्रेट महोदय की कचहरी में हम सब लोग उपस्थित हुए। सरकार की ओर से कहा गया कि एक सैनिक अफसर ऑसहेड शराब के नशे में मोटर गाड़ी हाक रहे थे और दो व्यक्तियों को कुचल दिया। ईश्वर की ही कृपा हुई कि वे बच गए। उन दोनोंके बयान हुए। उसके पश्चात् तीन और आदमियों की गवाही हुई। पता नहीं यह कहाँ से आ गए।

इन लोगों का कहना था कि दो सैनिक गोरे शराब पीकर मोटर में चले जा रहे थे। और इनके ऊपर मोटर चला दी। हमारे वकील ने एक गवाह से पूछा—'तुम कैसे जानते हो कि इन्होंने शराब पी थी।' उसने कहा कि इनकी मोटर ही ऐसी चल रही थी।

वकील ने कहा—'मोटर का क्या रंग था ?'

गवाह—(कुछ सोचकर) रात में मोटर का रंग हमें ठीक नहीं
ाई दिया।

वकील साहब—इतनी तेज़ बिजली की रोशनी सड़क पर थी, तुम्हें
नहीं दिखाई दिया ?

गवाह—हज़ूर, रात में बहुत-से रंग ऐसे दिखाई देते हैं जो दिन में
रे रंग दिखाई देते हैं।

वकील—अच्छा, रात में तुम्हें किस रंग की दिखाई दी ?

गवाह—सरकार, मैं तो दूर था। एक बार कुछ नीला-सा दिखाई
ा, ऐसा जान पड़ा कि पीलापन लिए हुए लाल-लाल है।

मजिस्ट्रेट—(गवाह से)—तुम जानते हो कि तुमने ईश्वर की
पथ खाई है। सच-सच बोलो।

गवाह—सरकार, मैंने कसम न भी खाई होती तो सच ही बोलता।
र पुश्त से मेरे परिवार में लोग गवाह होते चले आए हैं और किसी-
 सम्बन्ध में यह किसीने नहीं कहा कि कभी कोई झूठ बोला।

वकील—अच्छा, जब यह घटना हुई तब गाड़ी सड़क की बाईं ओर
ी कि दाहिनी ?

गवाह—हज़ूर, जहां तक मुझे याद है गाड़ी बीच में थी।

वकील साहब ने पूछा—तुम वहां क्या कर रहे थे ?

गवाह—मैं गा रहा था।

वकील—मेरा अभिप्राय यह कि उस स्थान पर तुम क्यों गए।

गवाह—यदि हम सरकार, उस समय न होते तो आज इजलास के
सम्मुख सत्य घटना कौन बताता ?

मजिस्ट्रेट ने कहा—तुम ठीक से जो पूछा जाता है, उसका उत्तर
दो, नहीं तो तुम्हें सज़ा हो जाएगी।

गवाह—हज़ूर, सभी लोग उधर से उस रात को जा रहे थे।
गोरे लोग जा रहे थे; यह बेचारे जो दब गए, वह जा रहे थे, मैं भी जा
रहा था। कोई पाप तो मैंने किया नहीं।

वकील—पाप-पुण्य नहीं, क्यों जा रहे थे, क्या काम था, यही इज-
लास जानना चाहता है।

गवाह—इसमे किसी की बात याद नहीं है किन्तु दहला
सोः रहा था।

हमारे वकील ने कहा कि इस गवाह ने इन लोग कुछ निराश न
गए थे। दूसरा गवाह भी बयान दे गया, उसने भी हमारे वकील
जिरह की। उसने भी ऐसी ही ऊटपटांग बात कही। मुकदमा दू
दिन के लिए स्थगित हुआ। तीसरे दिन मेरी गवाही हुई।

मुझसे उधर के वकील ने जिरह करनी प्रारम्भ की। मुझसे पू
कि आप क्यों इनके साथ थे। मैंने कहा कि हम लोग क्लब से साथ ही आ
रहे थे। उन्होंने फिर पूछा कि इन्होंने प्रतिदिन से अधिक शराब पी ली
थी? अब मैं बड़े फेर में पड़ा। मैं सोचने लगा कि सत्य बोलना चाहिए
कि नहीं। फिर मैंने सोचा कि मन्दिर में, धार्मिक स्थान में तथा महात्माओं
के सम्मुख सत्य ही बोलना चाहिए। किन्तु जहां चारों ओर झूठ-झूठ
है वहां सत्य बोलने से सत्य का अपमान होता है। मैंने कहा कि उस दिन
तो उन्होंने प्रतिदिन से कम शराब पी थी। बात यह थी कि इनकी
तबीयत कुछ अच्छी नहीं थी। इसीलिए कम शराब पी। यह दोनों
आ रहे थे, ये भी शराब पिए हुए थे। बहुत भोंपा बजाने पर भी हटे
नहीं।

दूसरे दिन फैसला हुआ, जिसमे यही निश्चय किया गया कि जो
लोग दबे थे, वही नशे में थे। सैनिक अफसरों ने बहुत आवाज दी,
किन्तु यह लोग हटे नहीं। घटना के बाद ही इन लोगों ने कार पर
बैठाकर इन्हें अस्पताल पहुचाया। इससे इनकी नीयत का पता चलता है।

अंग्रेज अफसर भारतवासियों के शुभचिन्तक हैं, ऐसी ही घटनाओं
से प्रतीत होता है। मजिस्ट्रेट ने अपने फैसले मे हम लोगो को बधाई
दी और यह भी लिखा कि यदि और भी ऐसे ही अफसर भारत में आ
जाए तो भारतीय राजनीतिक समस्याएं बात की बात मे सुलझ जाए।
हम लोग छूट गए। दावा करनेवालो पर डाट पड़ी कि ऐसे बेकार
मुकदमे लाकर सरकारी समय का विनाश होता है।

सध्या को वकील साहब मिलने आए। उन्हें पचास रुपये हम लोगों
ने दिए। उन्होंने अपनी बडी प्रशसा की। बोले—'मैंने कितने लोगों को

फांसी के तख्ते पर से उतार लिया है।' उन्होंने दस रुपये और मांगे। कहा—'मजिस्ट्रेट साहब के यहां उनाने में जो नाइन आती-जाती है, उसे देना है। क्योंकि मजिस्ट्रेट साहब इजलास करते अवश्य हैं, किन्तु फैसलों का अधिकांश श्रेय उसी नाइन के हाथ में रहता है। यदि उसे साध लिया जाए तो कोई ऐसा मुकदमा नहीं जो हार जाएं।' मैंने वकील साहब को रुपये दिलवा दिए और बोला—'तो आप लोगों का वकालत चलाने का बहुत अच्छा साधन है।'

वकील साहब बोले—'वकालत ऐसे ही चलती है। जब कोई रिश्वती हाकिम आता है तब हम लोग देख लेते हैं कि इसकी कहां-कहां रिश्तेदारी है, इसे किन बातों का शौक है। फिर क्या है, चल गई वकालत। एक हाकिम थे; उनका एक वकील साहब की लड़की से प्रेम हो गया। वकील साहब की वकालत ऐसी चमकी जैसे मंगल तारा चमकता है।

'एक मजिस्ट्रेट साहब को नाच-गाने का शौक था। फिर तो नगर के समाजियों द्वारा आप जैसा चाहिए, फैसला करा लीजिए।'

मैंने वकील साहब को बधाई दी।

विवाह

आज अपने जीवन में एक नई घटना हुई। सर बोरामल टाटकाके यहां विवाह था और यहां कर्नल साहब और कई व्यक्तियों को निमन्त्रण था। पार्टी भी थी। मुझे भी निमन्त्रण था। उसमें पार्टी का समय पांच बजे था। और विवाह का सात। मुझे पार्टी से विशेष रुचि नहीं थी क्योंकि इन दिनों मेरा स्वास्थ्य अच्छा नहीं था। फिर भी मन में कहा कि जब जाना ही है तब पार्टी में भी सम्मिलित होना आवश्यक है। नहीं तो मैं लिखनेवाला था कि पार्टी में नहीं आ सकूंगा।

ज्योंही मेरी कार पहुंची, सर बोरामल ने स्वागत किया। बर्ने साहब ने परिचय कराया। बाग खूब सजा हुआ था। कृत्रिम पहाड़ तथा झरने बने हुए थे। चारों ओर रंग-बिरंगे फूल नन्दन-कानन के समान खिल रहे थे। कई बड़े-बड़े खेमे लगे हुए थे। एक खेमे में हम लोगों के खाने-पीने का सामान लदा हुआ था। जितने हम लोग थे उससे अधिक व्हिस्की तथा शैम्पेन की बोतलें थीं। हिन्दुओं के जलपान की व्यवस्था अलग थी क्योंकि मैंने सुना है कि उन लोगों के भोजन का सामान गंगाजल में बनकर ही आता है और गंगाजल में जो कुछ बनाया जाए वह कहीं भी खाया जा सकता है, ऐसा उन लोगों का विश्वास है।

फिर हम लोगों की मेज पर ऐसे पदार्थ भी थे, जैसे मांस की और अंडे की बनी वस्तुएं। परन्तु लोगों को सुनकर आश्चर्य होगा कि हम लोगों की मेज पर कई हिन्दुस्तानी सज्जन थे। हमारी राय में जब हमारे देशवाले यह आपत्ति उठाते हैं कि भारतीय स्वराज्य के योग्य नहीं हैं तब भारतवासियों को इसपर इन्हीं के समान और लोगों के नाम उपस्थित करने चाहिए। क्योंकि मैंने देखा कि उनके कांटे भी वैसी ही सफाई से चल रहे थे जैसे हम लोगों के; और गिलासों को भी वे उतनी ही शीघ्रता से खाली कर रहे थे जितनी शीघ्रता से हम लोग।

ऐसी अवस्था में जहां तक मेरा विचार है, भारतीय लोग अंग्रेजों की बराबरी कर सकते हैं। मैं नहीं कह सकता और लोगों का क्या विचार है!

सात बजते-बजते सारा उद्यान आलोक से भर गया। रंग-बिरंगे बल्बों से सारे वृक्ष तथा पौधे सुसज्जित थे। एक ओर कारों का तांता लगा था। वह बाग परिस्तान लग रहा था। जिस भारत के सम्बन्ध में इङ्गलैण्डवाले अभी सोच रहे हैं, वह भारत अब नहीं रह गया। अब तो यहां जान पड़ता है कि सुवर्ण की घर-घर खान है, इतना वैभव, इतना विलास तो बड़े पुराने खानदानी लार्डों के यहां भी कम देखने में आता है। स्त्रियां भी अब भारत में पर्दे से बाहर आ गई हैं और एक बात मैं यह कहूंगा कि जिस नफासत, बारीकी, सुबुद्धि तथा सुरुचि से वह साड़ियां चुनती हैं उससे यह निष्कर्ष निकलता है कि भारत की व्यवस्था-

पिका सभाओ को चुनाव बन्द करके इन्हीपर सदस्यो के चुनाव का भार देना चाहिए। अवश्य ही भारत की सब व्यवस्थापिका सभाएं आदर्श सदस्यो की सस्था हो जाएगी। बहुत-से इतिहासकारो ने लिखा है कि भारत में बहुत-सी जातिया तथा अगणित भाषाएं हैं। यदि वे यहा की साड़िया और उनके रंग देखते तो ऐसा न लिखते।

एकाएक बाजे के शब्द सुनाई पड़े और धीरे-धीरे उस दल ने, जिसके साथ दूल्हा था, बाग में प्रवेश किया। दस-पन्द्रह प्रकार के बाजे थे। मैं ठीक-ठीक नहीं कह सकता कि वह क्या-क्या थे। बैण्ड तथा बैग पाइप तो मेरी जानकारी के थे और बाकी सब भारतीय थे। शोर इतना हो रहा था कि अपनी बात भी कठिनाई से सुनाई पड़ती।

फिर हाथी थे। पांच-छ: हाथी रहे होगे इसके पश्चात् कोई दो दर्जन ऊट थे, फिर पचास घोडे। विवाह में इन जानवरो का क्या काम था, समझ मे नहीं आया। जान पड़ता था कि डाका डालने दल चला आ रहा है। साथ-साथ आतिशबाजी भी थी और बहुत-से लोग कागज़ के फूल लिए हुए थे। धीरे-धीरे मोटर ने प्रवेश किया जिसमें दूल्हा बैठा हुआ था। उसके सिर पर विचित्र पगड़ी थी, जिसमें सोने की तथा फूल की लम्बी मालाएं लटक रही थीं। ऐसा जान पड़ता है कि किसीने एक गमले को उलटकर उसके सिर पर रख दिया है। दूल्हे का मुह इससे बिल्कुल ढंक गया था। राह की धूल से उसके चेहरे की पूरी रक्षा हो रही थी। विवाह के पहले चेहरे की इस प्रकार रक्षा भी आवश्यक है। मैंने सोचा कि अभी विवाह हो जाएगा, किन्तु मोटर आकर दरवाज़े पर खड़ी हो गई और वहा कुछ पूजा इत्यादि हुई; जिसे मैं समझ नहीं सका। और वह लौटाकर एक सुसज्जित शामियाने में बैठा दिया गया। मैंने सुना कि विवाह रात में होगा। और विवाह सब लोग देख नहीं सकते; केवल विशिष्ट व्यक्ति, जैसे दोनो के सम्बन्धी और नाई, ब्राह्मण इत्यादि।

मैंने सर टाटका से कहा कि यदि मैं देखना चाहू तो कैसे देख सकता हू। उन्होंने कुछ सोचकर कहा—'मुझे तो कोई आपत्ति नहीं है। मैं घर में स्त्रियों से पूछकर आपको बता सकूगा।' अन्त में उन्होंने मुझे

आज्ञा दे दी।

मैं बैरक लौट आया और ग्यारह बजे विवाह देखने चला। मैंने जो विवाह देखा वैसा ही सबका विवाह होता है, तो हिन्दू वि बड़ी भारी कसरत है। घण्टों तक विचित्र ढंग से बैठना पड़ता बगल में आपकी भावी पत्नी बैठती है जिसे केवल एक ओर नी निगाह किए बैठना पड़ता है। पुरुष और स्त्री एक-दूसरे से कपड़ों से ब भी दिए जाते हैं; सम्भवतः इसलिए कि कहीं घबड़ाकर भाग न जाएँ

ब्राह्मण लोग बराबर कुछ न कुछ पढ़ा करते थे। और इतने ज़ोर ज़ोर से कि किसीको नींद नहीं आ सकती। बीच-बीच पति-पत्नी फेरा चक्कर भी लगाया करते। सम्भवतः इसलिए कि देर तक बैठे-बैठे थक न गए हों। पण्डित लोग जो इतने ज़ोर-ज़ोर से पढ़ा करते हैं, उनका पुरस्कार भी मिलता रहता है। कुछ देर बाद एक लाल बुकनी लड़के ने लड़की के सिर के बीच भर दी। यही विवाहित स्त्री का बैज समझा जाता है। स्त्री को भी कुछ रंग पुरुष के ऊपर लगाना चाहिए; क्योंकि हिन्दू स्त्री सिर में लाल रेखा के रहने पर विवाहित समझी जाती है, किन्तु ऐसा चिह्न नहीं जिससे यह जाना जा सके कि यह पुरुष विवाहित है।

अलंकारों पर खोज

सेना का जीवन भारतवर्ष में बड़े आनन्द का होता है। कोई विशेष कार्य नहीं। भोजन का बहुत सुन्दर प्रबन्ध; खेल-कूद की बड़ी सुविधा, और रोब-दाब सबके ऊपर, किन्तु मेरे ऐसे व्यक्ति के लिए ऐसे जीवन में रस नहीं मिलता है। यहां प्रतिदिन दो कार्य मुख्य होते हैं। मदिरा-पान तथा ब्रिज का खेल। सभी सैनिक अफसरों के लिए यह काम आवश्यक-से हो गए हैं। मैं भी कभी-कभी ब्रिज खेलता था। किन्तु मेरा मन उसमें

अधिक नहीं लगता था और लोग मुझे कंजूस समझते थे। मेरा म
पुस्तकों के पढ़ने में और भारतीय बातों के जानने में अधिक लगता था

मैं चाहता था कि पुराने अंग्रेज़ी सैनिक अफसरों की भांति मैं
भारत के सम्बन्ध में कुछ पुस्तकें लिख डालूं। इससे एक लाभ तो
होगा कि मेरा नाम अमर हो जाएगा। अंग्रेज़ लोग जब भारत के सम्ब
में पुस्तकें लिखते हैं तब उनका बड़ा आदर होता है। वह विद्वान् हो
न हो, विद्वान् समझा जाता है। भारतवासी समझते हैं कि मेरे देश
इसे बड़ा प्रेम है और अंग्रेज़ खुश होते हैं कि उन पुस्तकों के अध्य
से उन्हें राजनीतिक गतिविधि में सहायता मिलती है। बिक्री
ऐसी पुस्तकों की बहुत होती है। और पुस्तकों में थोड़ी-बहुत भूल भी
तब भी वह प्रमाण मानी जाती है। कर्नल टाड, कनिंघम तथा
भी कई ऐसे उदाहरण मेरे सम्मुख थे। इसलिए मैंने भी कई पुस
लिखने का विचार किया। दो पुस्तकों की तो मैंने रूपरेखा भी
ली है। एक पुस्तक है 'भारतीय आभूषणों की उत्पत्ति और विक
तथा दूसरी पुस्तक होगी 'भारतीय राजनीति में धोती का ऐतिहा
महत्त्व'।

पहली पुस्तक के सम्बन्ध में मैंने बड़ी खोज की है। यद्यपि मैं
डेढ़ साल ही यहां रहा हूं और केवल उत्तर भारत में ही रहा हूं, फिर
मैं इस विषय पर लिखने का अपने को अधिकारी समझता हूं। यह
इस अर्थ में क्रान्तिकारी होगा। यहां तो मैं केवल स्मृति के लिए
अंकित कर रहा हूं। पुस्तक में तो कहीं अधिक विवेचन होगा तथा
भी गहरा अध्ययन होगा। जैसा नेथानियल। इसीसे बिगड़कर
शब्द भी बन गया है। इसकी उत्पत्ति में एक कथा है। सन् ११७
इटली से नेथानियल बिलगोजिया नाम का एक ईसाई घूम
घामता भारत आ गया। वह राजपूताने में एक राजा के यहां
डाक्टरी करने लगा। रानी और राजा में कुछ झगड़ा हो गया।
साहब ने नेथानियल से सलाह ली। उसने सोच-विचारकर कहा—
एक ऐसी तरकीब निकाली है जो आप ऐसे महान राजाओं के
शोभनीय है और आपका कार्य भी सिद्ध हो जाएगा।' उसने कहा

आप सोने के नग का एक बड़ा छल्ला बनवाइए और रानी साहब से कहिए कि मैंने एक नवीन ढंग का आभूषण बनवाया है। उसे नाक में छेदकर पहनना होता है। आभूषण समझकर रानी साहब को इसे धारण करने में कोई आपत्ति न होगी क्योंकि कौटिल्य ऋषि ने कहा है कि सोने की एक गाड़ी बना दीजिए और कहिए कि आभूषण है और इसे धारण किया जाता है, तो स्त्रियां इस गाड़ी को गरदन पर रख खींचेंगी।

यदि आप रानी साहब पर रोब जमाना चाहेंगे अथवा बस में करना चाहेंगे तो कठिनाई होगी। वह भी स्वाभिमानी ठहरीं। और जब वह सोने का छल्ला अलंकार समझकर नाक में धारण कर लेंगी तब आपको यह सुविधा होगी कि जब वह बिगड़ें आप चुपचाप डोरी पकड़ लिया कीजिएगा। वह चुप हो जाएगी। राजा साहब ने ऐसा ही किया। राजा साहब ने अपने मन्त्री से कहा, उन्होंने भी अपनी स्त्री को पहनाया। इसी प्रकार सारे दरबार के पुरुषों ने अपनी स्त्रियों को इस भांति अलंकार के बहाने वशीभूत किया। तभी से इसका चलन हुआ और नथानियल साहब के नाम पर नथ या नथिया कहा जाने लगा।

जब से स्त्रियां पुरुषों के बराबर होने लगीं और स्वाधीन होने लगीं तब से इसका प्रचलन उठ गया। यद्यपि मैं भविष्यवक्ता नहीं हूं तथापि मुझे ऐसा जान पड़ता है कि इसकी प्रतिक्रिया होनेवाली है और सम्भव है पुरुषों को अपनी नाक छेदानी पड़े।

कर्णफूल की उत्पत्ति इससे भी पुरानी है। जहां तक खोज से पता चला है, महाभारत के समय से इसकी प्रथा चली है। महाभारत में कर्ण नाम का एक योद्धा था, उसे फूल का बहुत शौक था। अब वह फूल रखे कहां ? कोट उस युग में नहीं था कि बटनहोल में रखा जा सके। हाथ में सदा रखना असम्भव था। इसलिए उसने कान पर रखना आरम्भ किया। देखा-देखी और लोगों ने भी कर्ण की नकल की। एक दिन कहीं उत्तरा ने देख लिया। उसने कहा—'इन फूलों में क्या रखा है ? मैं तो सोने का फूल धारण करूंगी।' उसने सोने का बनवाया। एक दिन वह कहीं गिर गया। उसने सोचा कि यह तो ठीक नहीं, कान छिदवा लिया जाए, तब गिरेगा नहीं। यह है कर्णफूल की उत्पत्ति।

समय के साथ-साथ इसमें बड़े परिवर्तन हुए। जब
स्त्रियों मे जागृति हुई तब इन्होंने प्राचीन युग की प्रथा छोड़
यूरोप मे यह दूसरे रूप में आया, यूरोप मे यह प्रथा कैसे आई
इस पुस्तक का नहीं है, किन्तु यह तो सर्वसम्मत बात है कि यु
बात समाज मे हो जाती है, वह श्रेष्ठ और सभ्यतानुकूल स
है। जब यहा की महिलाओं ने यूरोपीय स्वरूप इसका देखा त
अनुकरण इन्होंने किया। कर्ण की स्मृति जा रही है। इयरिंग
अब इन्हें स्त्रियां धारण करती हैं। और ठीक भी है। पुराने
पुरानी वस्तुएं ऐसे असभ्य युग की स्मृति जाग्रत् करती हैं कि
देश तथा जाति उन्हें ग्रहण करने मे अपना अपमान समझत
पुराने समाचारपत्र फेंके जा सकते हैं, पुराना फरनीचर नीला
सकता है, पुराने बाल और नाखून कटाए जा सकते हैं, तो
भी छोड़ देनी चाहिए। मेरी राय मे पुरानी शराब और पु
छोड़कर कोई पुरानी वस्तु ग्रहण के योग्य नहीं होनी चाहि

म्यूनिसपल चुनाव

मेरे गुरुवर पण्डितजी आज सवेरे ही पहुंच गए। मैं
था, वह गंगास्नान के लिए जा रहे थे। मैंने यहा सुना
नहाने का उतना महत्त्व भारतवर्ष मे नहीं है, जितना गंगा मे
हमारे पण्डितजी बतलाने लगे कि गंगा की बड़ी महत्ता है। उ
कि एक बूंद जिस वस्तु मे पड़ जाए, वह कितनी भी अपवि
हो जाती है। और मरने के समय मुख में थोड़ी-सी डाल
मनुष्य सीधे स्वर्ग को जाता है। और स्नान करने से सभी प
हैं। मैंने उनसे कहा कि एक बोतल मेरे लिए आप इनसा
इङ्गलैण्ड भेज दूं। अपने परिवार के सब लोगों को स्वर्ग भेज

इतना पर्याप्त होगा। मैंने उनसे पूछा—'हिन्दू बहुत-से मेरे यहां भोजन करने से इनकार करते हैं। यदि उनमें गंगाजल छिड़क दूं तब तो उन्हें खाने में कोई आपत्ति न होगी ?'

मैं तो धार्मिक प्रकृति का आदमी ठहरा, किन्तु सेना में घाट-घाट में सदा रहने से अनेक पापों का भागी बनना पड़ा होगा। मैंने उनसे पूछा कि मैं एकाध दिन स्नान कर लूं तो अनेक पापों से मुक्त हो जाऊंगा ? क्या आप कोई व्यवस्था कर सकते हैं कि मैं कभी-कभी वहां स्नान कर लूं ? नहीं तो चार घड़े यहीं भिजवाने का प्रबन्ध करा दीजिए। उन्होंने कहा कि मैं जो पुस्तकों तथा शास्त्रों में लिखा है, उसीके अनुसार कहता हूं। मैंने कहा कि आप पुस्तकों पर विश्वास करते हैं, मैं आपपर विश्वास करता हूं। मैं एक बोतल जल अपने पास भी रखूंगा। एक बूंद प्रत्येक दिन चाय में मिला लूंगा। जान-अनजान में जो दोष हो जाए वह तो न लगेगा। मुझे आपके वचन पर पूर्ण विश्वास है।

उन्होंने यह भी कहा कि चलिए आज गंगा की सैर करा लाएं। मुझे कोई काम नहीं था। मैं उनके साथ कार पर गंगा के तट पर चला गया। वहां से लौटने में ग्यारह बज गए। राह में एक स्थान पर इतनी भीड़ थी कि कार रोक लेनी पड़ी। बड़ा शोर था, पास ही खेमे लगे हुए थे। मैंने पूछा कि पण्डितजी, आज कोई पर्व या त्यौहार है। पण्डितजी से पता चला, आज कानपुर म्यूनिसिपैलिटी का चुनाव है। इङ्गलैण्ड में मैंने चुनाव देखे थे। बड़े-बड़े भाषण होते थे, जुलूस निकलते थे, झण्डे निकलते थे। यहा भी देखू कि भारतीय ढंग कैसा होता है।

मैं गाडी पर से उतर पड़ा। पण्डितजी से अनेक प्रश्न करता हुआ भीड़ मे घुसा। अनेक लोग झण्डे लिए यहां भी घूम रहे थे। कुछ लोग बीच-बीच मे चिल्लाते भी थे। एक झण्डे पर गाय का चित्र बना था। इससे यह जान पड़ा कि यह दल हिन्दुओ का है।

चिल्लाहट, झण्डा, भीड़, जुलूस तो यहावालों ने, जान पड़ता है, हमारे यहा से सीखा है; किन्तु भारतवासियों में एक गुण यह बहुत बड़ा है कि जो कुछ सीखते हैं उसमें उन्नति भी करते हैं। यहां मैंने देखा कि खेमो मे पान की दुकानें हैं और वोट देनेवालों के लिए जलपान की

व्यवस्था भी है। वोट देनेवालों की बड़ी खातिरदारी होती है। यह खातिरदारी यहां तक बढ़ती जाती है कि वोटर बेचारा घवड़ा जाता है।

मेरे सामने एक वोटर आया। गाय का झण्डा लिए एक व्यक्ति आया और उसके साथ कोई एक और व्यक्ति आया। उसने कहा—'देखिए, यदि मैं सदस्य चुन लिया गया तो नगर में हर मुहल्ले में गोशाला बनवा दूंगा। नगर की जितनी गोमास बेचनेवाली दुकानें हैं सब एक दिन में बन्द करा दूंगा।' इसी बीच एक व्यक्ति ऐसा आया जिसके साथ चार-पांच आदमी थे। प्रत्येक के हाथ में एक-एक झण्डा था। हर एक झण्डे पर बड़ी-बड़ी कैंचिया बनी हुई थीं। उसके नेता ने इस वोटर को समझाना आरम्भ किया—'हम लोग समाजवादी दल के हैं, हम लोग सबको समान बनाना चाहते हैं। यह कैंची इसीका प्रतीक है। जो छोटा है उसे बड़ा बनाने में कठिनाई है, असुविधा है, परिश्रम है, समय की आवश्यकता है। इसलिए हम लोग बड़ों को ही छोटों के समान बनाने की चेष्टा करेंगे। यदि हमे आप म्यूनिसिपैलिटी में भेज देंगे तो नगर की सब सड़कें बराबर करा देंगे। नगर के घरों की ऊंचाई एक-सी करा दी जाएगी। कोई कारण नहीं कि घी पर अधिक चुंगी लगे और चोकर पर कम। सब बराबर कर दी जाएगी। किसीके घर में एक पानी का नल, किसीके घर में चार, यह असमानता नहीं हो सकेगी। सबके यहां एक-एक नल कर दी जाएगी। क्यों बेचारा किसीका घर एक ही मंजिल का और किसीका चारमंजिल का रहे? वह सब गिरवा दिए जाएंगे और सबका घर एक-एक मरातिब का कर दिया जाएगा।

'देखिए क्या अन्याय होता है कि सिनेमा में कहीं एक तमाशा, कहीं दूसरा खेल दिखाया जाता है। इससे कोई कुछ खेल देखता है, कोई कुछ। सब सिनेमाओं में एक ही खेल दिखाने की व्यवस्था की जाएगी। जिससे नगर-भर को इस विषय का ज्ञान एक-सा हो।

'बाजारों में एक दूकान पर एक ही वस्तु बिकेगी। इसका क्या अर्थ कि एक ही व्यक्ति चावल भी बेचे, और दाल भी बेचे तथा गेहूं भी बेचे। हम अपने नगर को आदर्श नगर बनाएंगे। और समानता में

सगार-भर को शिक्षा देंगे।' यह व्याख्यान सुनने पर वोटर महोदय इसी ओर झुकने लगे। हिन्दूवाला भावी सदस्य उसे अपनी ओर खींचने लगा। कुछ और लोग आए। इधर से भी उधर से भी। और उसे दोनों ओर खींचने लगे लोग। वोटिंग घर के द्वार के निकट जाते-जाते उसके कुरते की एक बांह समाजवादी नेता के हाथ में थी और एक बांह हिन्दू नेता के। हाथ उसके कुरते से बली थे नहीं तो वह भी निकल आते। भीतर जाकर उसने किसे वोट दिया यह मुझे पता नहीं। किन्तु उसके लौटने से पहले ही बाहर दोनों दलों में शक्ति की परीक्षा का आयोजन हो गया। झण्डे का डंडा, हिन्दुस्तानी-अंग्रेजी जूते, चप्पल, सभी सजीव हो गए और उनमें गति आ गई।

परन्तु पन्द्रह मिनट के पश्चात् ही शान्ति स्थापित हो गई। पुलिस के कुछ कान्स्टेबल वहां पहुंच गए। केवल दो व्यक्ति अस्पताल पहुंचाए गए। यहां की पुलिस भी बड़ी बुद्धिमती होती है। आते ही इसने झगड़ा शान्त कर दिया। क्या इसे युद्धस्थल में नहीं भेजा जा सकता? जब किसी भांति लड़ाई बन्द न होती हो तब भारत की पुलिस पहुंचकर बन्द कर सकती है।

चुनाव का कार्य पूर्ववत् चलने लगा और वही-वही बातें फिर-फिर देखने में आईं। कोई नई बात न थी। इसलिए मैं बैरक लौट आने के लिए गाड़ी पर बैठ गया। पण्डितजी से मैंने पूछा—'क्या मुसलमानों ने बायकाट किया है? कोई मुसलमान चुनाव में दिखाई नहीं दिया।' पण्डितजी ने बताया कि मुसलमानों का चुनाव अलग होता है। पण्डितजी ने यह भी बताया कि सरकार ने ऐसा नियम बनाया है कि दोनों के चुनाव अलग-अलग हों। जैसे मूली और दही एकसाथ नहीं खाया जा सकता, मांस और दूध एकसाथ नहीं खा सकते, शहद और घी का संयोग विष है, शृंगार और रौद्ररस एकसाथ ठीक नहीं हैं, उसी भांति मुसलमान और हिन्दू एक साथ वर्जित हैं। मैंने—'पूछा इसका कोई कारण तो होना चाहिए?'

स्वास्थ्य-रक्षा

जब से भारत मे आया हूं, बिना नागा प्रति रविवार को गिरजाघर जाता हू। ईसाई धर्म पर पूरा-पूरा विश्वास है। मैं विलायत के एक गिरिजाघर के लिए प्रतिमास चन्दा देता हू और यहा अपने गिरजाघर में भी प्रति सप्ताह कुछ न कुछ दान देता रहता हू। फिर ऐसा विश्वास भी है कि सारे ससार मे जो असन्तोष है उसका यही एक कारण है कि वह ईसाई धर्म को नहीं मान लेता है।

यूरोप और अमेरिका आदि देशो मे सदा शान्ति रहती है और वह लडते हैं, तब भी उनका ध्येय शान्ति ही होता है। हमे ध्येय की ओर ध्यान देना चाहिए। उस ध्येय की प्राप्ति के लिए कोई भी राह पकडी जा सकती है।

कल रविवार को मैं सन्ध्या समय टहलने के लिए निकल पडा। अकेले था। टहलता हुआ दूर निकल गया। मैं शहर की ओर अकेले टहलने कभी-कभी चला जाता हू और हमारे साथी उस ओर कम जाते हैं। उनका कहना है कि हिन्दुस्तानियो का रहन-सहन ऐसा होता है कि कोई सभ्य पुरुष उधर जा नही सकता।

उसी विषय पर एक पुस्तक हमारे क्लब के पुस्तकालय मे हैं, जिसे मैंने पढ़ी थी। एक स्थान पर उसमें लिखा था—'भारतवासी कपड़ा उतार-कर सबके सामने नदियो मे स्नान करते हैं, और धोतिया पहनते हैं। जिससे टांगो के नीचे का भाग दिखाई देता है।' उसमें यह भी लिखा था कि उनके बीच जाने से तुरन्त रोग का शिकार बन जाना पड़ेगा क्योंकि जहां यह लोग रहते हैं, वहां मलेरिया, टाइफाइड, क्षय, प्लेग, कालरा, चेचक के कीटाणु सर्वदा घेरे रहते हैं। जो लोग नही मरते उनका कारण यह है कि उनमे रक्त की कमी रहती है और यह कीटाणु उनका शरीर अपना अड्डा बनाने के उपयुक्त नही समझते। जिनमे कुछ भी रक्त होता है वह किसी न किसी ऐसे रोग से मर जाते हैं।'

मैंने इन बातों पर विचार नहीं किया। मेरे रेजिमेंट में लोगों ने मुझसे मना भी किया, किन्तु मैंने कहा कि ऐसा मैं डरनेवाला नही हू।

ाज मे उनका मान है ।

स्वास्थ्य की दृष्टि से हम लोगो ने काटा, चम्मच और छुरी से जन करने की प्रथा यहा भी चलानी चाही, किन्तु अभी उसमे सफलता न मिली है। देखिए, हाथ से खानेवाले की आयु कम होती है। कर्नल हब ने इतना बताया तब हमे सन्तोष हुआ। हमारी समझ में तब आया, ही कारण है कि प्रत्येक दस साल पर देश की आबादी बढती चली जा ही है। यदि ब्रिटिश सरकार ने इनके स्वास्थ्य का प्रबन्ध न किया ाता तो भारतवर्ष मे इस समय पाच-छः सौ आदमी रह गए होते। ो स्थिति हमे बताई गई उससे यही अनुमान होता था।

मैंने पण्डितजी से एक दिन बताया कि देखिए, हम लोगो ने आपके वास्थ्य के लिए कितना किया है। आप लोग उसके लिए कुछ धन्यवाद ाही देते। उन्होंने कहा कि भारतवासी मौखिक धन्यवाद नहीं देते। ार्य से ही धन्यवाद देते हैं। देखिए, आपका कपडा हम लोगो ने धारण कर लिया। यह धन्यवाद देने के ही लिए। पण्डित लोग भी यहा केवल एक दुपट्टे से काम चला लेते थे, वह अब कोट पहनते हैं। यह आपके प्रति कृतज्ञता प्रदर्शित करने के लिए।

इसाई धर्म की व्याख्या

मैं पण्डितजी के साथ टहलता जा रहा था। एक ईंट के लाल मकान के पास पन्द्रह-बीस आदमी खड़े थे। हम लोग निकट पहुचे तो हमने देखा कि एक व्यक्ति भाषण दे रहा है। कोट, पतलून धारण किए एक पुस्तक हाथ मे लिए था। कोट दस साल की पुरानी और पतलून उससे पुरानी जान पड़ती थी। टाई ढीली-ढाली थी। उस व्यक्ति का रग रोशनाई के समान था। वह हजरत ईसा-मसीह की प्रशंसा कर रहा था। जब मैं पहुचा तब वह कह रहा था कि हजरत

ईसा मसीह ने एक कोढ़ी को हाथ फेरकर चंगा कर दिया। [illegible]
भीड़ में से किसीने पूछ दिया कि इसका ईसा मसीह पानेवाले [illegible]
थे कि जादूगर थे। व्याख्याता महोदय समझा रहे थे कि [illegible]
गरीबों, दीन-दुखियों के प्रति दया और सेवा का भाव उनमें था।

मैं कुछ और देर तक उनका भाषण सुनता, किन्तु बगल में [illegible]
ओर भीड़ दिखाई दी। मैंने समझा यहां भी किसी धर्म का [illegible]
होता होगा, किन्तु वहां देखा कि भिखमंगे की भांति एक फकीर [illegible]
जड़ी-बूटियां और दवाइयां फैलाए अपनी दवाइयों की प्रशंसा कर [illegible]
है। बहुत-सी बातें तो उसकी मेरी समझ में नहीं आईं, किन्तु [illegible]
समझ सका। जान पड़ता था कि वह कोई बहुत बड़ा डाक्टर है। [illegible]
भीड़ भी अधिक थी जिससे मेरी समझ में यह बात आई कि [illegible]
लोगों को अपने स्वास्थ्य की बड़ी चिन्ता रहती है। सरकार की ओर से
अस्पताल पर्याप्त सख्या में नहीं है, इसीलिए सड़कों पर डाक्टर [illegible]
अपनी दवाइयां लोगों के हितार्थ बेचते रहते हैं। मुझे पता नहीं कि [illegible]
डाक्टरों के पास किसी मेडिकल कालेज की डिग्री है कि नहीं।

हम लोग लौटकर फिर उसी ईसाई उपदेशक के पास पहुंचे। [illegible]
सन्ध्या हो चली थी और यहा भीड प्रायः नहीं थी। धर्म के [illegible]
शारीरिक स्वास्थ्य का लोगों को अधिक ध्यान था और उस दवा बेचने-
वाले के पास अधिक लोग एकत्र हो गए थे। लोगों ने केवल बातें सुनीं
कि दवाइयां भी मोल लीं, कह नहीं सकता।

उस ईसाई के साथ हम लोग लाल ईंटवाले घर में चले गए। वहां
एक नौकर था। कुछ पुस्तकें थीं। मैंने पूछा कि कितने दिनों से तुम
उपदेशक का कार्य करते हो। उसने बताया कि दस साल से। मैंने पूछा
कि कहां तक पढ़े हो। उसने कहा कि छठे दर्जे तक अंग्रेजी पढ़ी है। उसने
स्कूल में भी बाइबिल पढ़ी है। मैंने कहा—'तुमने ईसाई सिद्धान्त और
उसके दर्शन का कितना अध्ययन किया है?' उसने बताया कि बेकार
बातों में सिर खपाना निरर्थक है। हिन्दू लोग धर्म नहीं कर्म समझते हैं।
ईसाई धर्म की व्याख्या और बाइबिल के सिद्धान्त सौ साल तक समझाएं
तो उससे कोई लाभ न होगा। अभी प्लेग फैले तो गांव में लोग दूसरे का

दी नही उठाते। हम लोग जाकर उठा लेते हैं और परिवार ईसाई हो ता है। अकाल पडता है, तब हम लोग भोजन देते हैं; त्याग और लिदान पर भाषण देने से क्या लाभ ? डोम लोग रात को पुकारे जाते । पुलिस रात को डोमों के घर पर पुकारती है और उनका नाम चोरो मे लिखा जाता है। हम उन्हें ईसाई बना लेते हैं, वह इससे मुक्त हो जाते हैं। फिर वह चोरी करें तो चोर नही समझे जाते। क्योंकि कोई ईसाई चोर नही होता। मैंने कहा कि यह नई बात बताई। कोई ईसाई चोर नही होता। यदि ऐसा होता तो यूरोप के सब जेलखाने तोड़ दिए जाते। उसने कहा कि यह हम नही जानते। कोई डोम जब चोरी मे पकड़ा जाता है, तब हम लोग कह देते हैं कि यह ईसाई है और उसकी जमानत हो जाती है और वह छूट जाता है।

मैंने उसकी कार्यवुद्धि पर बड़ी प्रसन्नता प्रकट की और कहा—'किन्तु यह बात आपने अधिकांश उन लोगो की बतलाई जो निम्न कोटि के लोग हैं। ब्राह्मण, क्षत्री, कायस्थ, वैश्य इन लोगो मे से कितने को ईसाई बनाया?' उसने उत्तर दिया—'दो बातें हैं। एक तो यह लोग यो ही आधे ईसाई हैं। पहनावे मे, बोल-चाल मे और खान-पान में तो हम लोगो से बढकर। पाव रोटी या नाश्ता इनके यहा होता है, बहुत-से स्थानों पर काटा-छुरी से भोजन होता है। स्त्रिया ऊची एडी का जूता पहनती हैं, कोई-कोई 'स्कर्ट' भी पहनती हैं। 'चीज' 'जाम' इनके खाने मे शामिल है; पीतल, फूल और काँसे के बरतन की जगह चीनी प्लेट, थालियाँ और शीशे के गिलासो का प्रयोग हो ही रहा है। केवल गिरजाघर में नही जाते। सो मन्दिर ही कब जाते हैं ? गंगा इत्यादि मे इनकी श्रद्धा है ही नही। केवल बपतिस्मा इन लोगों ने नहीं लिया, नही तो बहुत-से इनमे हमसे बढ़कर ईसाई हैं।

'दूसरी बात यह है कि यह लोग जो ऊचे समझे जाते हैं हमारे किस काम के ? लड़ाई यह लड़ नहीं सकते। कोई पुरुषार्थ का कार्य यह कर नहीं सकते।'

मैंने उसे धन्यवाद दिया और चला। पण्डितजी मेरे साथ थे। मैंने कहा कि देखिए पण्डितजी, यदि सारा भारत ईसाई हो जाए तो सब

राजनीतिक झगड़े भी दूर हो जाए। पण्डितजी ने कहा कि इसमें वि
परिश्रम की आवश्यकता नहीं है। जिस प्रकार स्कूलों और कॉले
मे शिक्षा हो रही है, वैसी ही चलती जाए तो बिना प्रयास भारत ई
हो जाएगा। किन्तु मैंने एक बात सुनी है। देशी ईसाइयों को विदे
ईसाई अपने बराबर का दर्जा नहीं देते। मैंने कहा—'पण्डितजी, ह
लोग शासक हैं, आप लोग शासित। यह अन्तर तो रहेगा ही। मुसलम
लोग जब यहां राज करते थे तब क्या अपने बराबर आप लोगों क
समझते थे? अकबर इत्यादि ने भी हिन्दू लड़कियों से अपने यहां विवा
किए, अपनी लड़की से या शाही लड़की से किसी हिंदू राजा का विवा
किया? हम लोगों के लिए भारतवासी कहते हैं कि रंग का भेद करते
हैं। यह गलत है। उनकी समझ मे नहीं आया। रंग का भेद नहीं है।
भेद इतना है कि हम लोग शासन करनेवाले हैं। तब शासक अवश्य ही
ऊंचे होंगे। भगवान को भी यह स्वीकार नहीं होता तो हम लोगों को
शासक न बनाते। अच्छा पण्डितजी, बताइए, आपके यहां जो बरतन
मांजता है उसके साथ आप एक खाट पर बैठ सकते हैं?' पण्डितजी ने
कहा—'नहीं।' तब मैंने कहा कि जब साधारण मालिक अपने नौकर
के साथ नहीं बैठ सकता, तब बड़े देश के शासक लोग कैसे शासितों
के साथ बैठ सकते हैं। आप लोगों की शिकायतें फजूल हैं।

पण्डितजी बोले—'इस प्रकार आपस मे मनोमालिन्य बढ़ता
जाएगा।' मैंने कहा कि इसलिए तो कहा जाता है कि सारा भारत ईसाई
हो जाएगा, तब सब एक हो जाएंगे। तब शासक और शासितों का
एक धर्म हो जाएगा। तब यह भेद-भाव मिट जाएंगे। तब देशी ईसाई
और विदेशी ईसाई मिलने-जुलने लगेंगे। विवाह इत्यादि आपस में
होने लगेगा और एक एंग्लोइंडियन जाति पैदा होगी जिसपर ब्रिटेन
को गर्व होगा कि हमने साम्राज्य ही नहीं बनाया, एक जाति भी बनाई।

राजनीतिक षड्यंत्र

कल सन्ध्या को पत्रो मे मैंने पढ़ा कि नगर मे दफा १४४ एक महीने के लिए लगा दी गई है जिसमे कोई लाठी-डडा लेकर नही निकले। मेरी समझ मे नहीं आया कि यह क्या बात है। विशेष ध्यान भी नही दिया। सन्ध्या समय कुछ इस प्रकार की चर्चा चली कि संभव है, हम लोगो की आवश्यकता पड़े। मैंने पूछा—'क्या बात है?' कर्नल साहब ने कहा कि तुमने पढ़ा नहीं, नगर में दफा एक सौ चौवालीस लगा दी गई है। नगर मे रामलीला होनेवाली है, संभव है झगडा हो जाए।

मैं अभी तक यह नहीं जानता था कि रामलीला क्या है? राम का नाम तो मैंने सुना था। याद आता है कि कहीं किसी पुस्तक मे पढ़ा भी था कि राम नाम का कोई राजकुमार था। राजनीतिक षड्यंत्र ने उसे राज्य से निकलवा दिया था। इसके विषय मे मुझे और कुछ ज्ञात न था। किन्तु यह रामलीला क्या है, यह तो मुझे एक नई वस्तु जान पड़ी।

मैंने कहा कि मैंने तो यह भी नहीं समझा कि दफा एक सौ चौवालीस क्या है और रामलीला क्या है। कर्नल साहब ने कहा कि इतने दिनों तक यहां रहे, रामलीला नही जानते? रामायण का नाम सुना है? मैंने कहा कि हां, रामायण तो जानता हू, एक ग्रीक पुस्तक का अनुवाद है। कर्नल साहब ने कहा कि मैं विद्वान इतना नही हू कि बता सकू कि अनुवाद है या मूल। हां, इतना जानता हू कि रामायण एक पुस्तक है जो राजविद्रोह से भरी है। भारत सरकार कमजोर है, इसलिए उसने इसे जब्त नहीं किया। जो कुछ उसमे लिखा है उसीका नाटक के रूप मे हिन्दू लोग सार्वजनिक रूप से प्रदर्शन करते है।

उसमे लड़ाई इत्यादि दिखाते हैं जिसके द्वारा हिन्दू लोग धीरे-धीरे युद्धविद्या की शिक्षा देते हैं, जो भविष्य मे हम लोगों के लिए बड़ी हानिकारक है। कठिनाई यह है कि इसे धर्म का स्वरूप इन लोगों ने दे रखा है। इसीसे सरकार इसे बन्द करने से डरती है। उसका मतलब

एक यह भी है कि हम लोग इस देश पर कभी राज करते थे, 'वह इस
यहा अच्छा था। अंग्रेजी राज्य से उत्तम। इस प्रकार अंग्रेजी शासन
की हीनता प्रकट की जाती है।

दफा एक सौ चौवालीस का नाम तो बदलकर सुधार की दफा
रख देना चाहिए। यह फौजदारी दफा का एक कानून है, जिसने हम
लोगों की रक्षा की है। नहीं तो हम लोग बड़ी कठिनाई में पड़ जाते।
दफा तो पहले से थी, किन्तु इसकी उपयोगिता लोग नहीं जानते थे।
सुनता हूं, ठीक जानता नहीं, किसी भारतवासी कानूनदां ने ही इसकी
व्यापकता बनाई। भारतवासी होते बड़े बुद्धिमान हैं। उन्हें बस अपनी
ओर मिला लेने की बात है। वह यदि तुम्हारे मित्र हो जाएं तो तुम्हारे
लिए अपनी नाक कटा सकते हैं। दफा एक सौ चौवालीस के द्वारा
आपका दाढ़ी बनाना रोका जा सकता है, आपका चश्मा लगाना
रोका जा सकता है, आपका ससुराल जाना रोका जा सकता है, आपकी
चिट्ठी रोकी जा सकती है, आपकी यात्रा रोकी जा सकती है। मृत्यु
के अतिरिक्त कोई ऐसी बात नहीं है, जो इस दफा के द्वारा रोकी न जा
सके।

वह इसलिए इस समय लगा दी गई है कि भीड़ रहती है। ऐसे
समय यदि हिन्दू लोग लाठी इत्यादि लेकर निकलेंगे तो सम्भव है कि नगर
पर अधिकार जमा लें। मैंने पूछा कि हम लोगों के पास बन्दूकें हैं,
हथियार हैं, लाठी से कैसे अधिकार कर लेंगे ? उन्होंने कहा—'हां,
हो सकता है, किन्तु हम लोग किसी प्रकार अवसर देने के लिए तैयार
नहीं हैं।'

मैंने कहा—'अच्छी बात है, मैं रामलीला देखता हूं कि कैसी होती
है, उसमें क्या होता है।' कर्नल साहब ने कहा कि ऐसा तो भय से खाली
नहीं है। मुझे इसके लिए प्रबन्ध करना होगा। एक ब्रिटिश सैनिक
की जान खतरे में रहेगी। मैंने कहा कि जो हो, मैं देखूंगा अवश्य।

रामलीला

मैंने उन्ही अपने मित्र पण्डितजी को बुलाया कि मुझ रामलीला दिखा दीजिए। उनसे पता चला कि रामलीला एक दिन नहीं होती, वह पन्द्रहियों और कहीं-कहीं तो महीनो चलती है। अच्छा यह है कि शाम को ही यह होती है।

पण्डितजी से मैंने कहा जो विशेष दिन हों, जिस दिन कोई विशेषता हो, उस दिन मुझे ले चलिए। पहले दिन मैं रामलीला देखने पहुचा। मैंने समझा था कि किसी विशेष हाल या भव पर यह लीला होती होगी। किन्तु भारतवासी बडे विद्वान होते हैं। उन्होंने सोचा कि व्यर्थ धन के अपव्यय से क्या लाभ। सडकें तो जनता की हैं ही, इनका उपयोग सब लोग कर सकते हैं। जो चीज सबकी है उसका सभीको उपयोग तथा उपभोग करने का अधिकार होना चाहिए।

सड़क पर बडी भीड थी। कुछ लोग एक ओर से जाते थे, कुछ लोग दूसरी ओर से। सवारियो का आना-जाना बन्द था। इतनी भली बात इन लोगो ने की कि रेल की लाइन या रेलवे स्टेशन पर यह कृत्य नही आरम्भ किया, नही तो सात आठ घण्टे रेलें बन्द रहती।

कार तो बहुत दूर छोड़ देनी पड़ी।

मुझे सब ठीक-ठीक देखना था, इसलिए भीड़ में जाना आवश्यक था। भीड मे देखा कि कुछ लोग कधे पर, कुछ लोग सडक के किनारे किसी वस्तु पर बडी-बडी थालिया रखे हुए हैं। उनमे उजली-उजली छोटी-छोटी टिकिया रखी हुई हैं। मैंने समझा भारत मे मलेरिया का प्रकोप अधिक होता है। सभवतः कुनैन की टिकिया सरकार की ओर से सार्वजनिक ढग से बिक रही हो। किन्तु पीछे पता चला कि यह मिठाई है। इसे रेवड़ी कहते हैं। मुझे आश्चर्य हुआ कि हंटले पामर या जेकब कंपनियों ने अभी इन्हें बनाकर भेजना आरम्भ नही किया।

कुछ और बड़ी थालियां थीं, जिनपर चावल चिपटा करके बिक रहा था। रेवड़ीवाली तथा इन चिपटे चावल की थालियो के किनारे

दूसरे ही दिन मैंने रामायण की एक पोथी बाजार से मंगवाई। अभी तक अंग्रेजी में इसका कोई संस्करण नहीं निकला। सुना है कि किसी अंग्रेज ने इसका अनुवाद किया है। उसे मंगाने का विचार है। अंग्रेज लोग भारतीय साहित्य और संस्कृति का कितना उद्धार करते हैं, फिर भी भारतवासी उनका विरोध करते रहते हैं। कितनी कृतघ्नता है!

दो-तीन दिनों के बाद मैं फिर रामलीला देखने आया। आज की लीला मुझे मनोरंजक जान पड़ी। कई व्यक्तियों ने विचित्र कपड़े पहन लिए थे और मुंह पर चेहरा लगा लिया था। चेहरे से बड़ी लम्बी लाल जीभ निकली हुई थी। इन लोगों के एक हाथ में तलवार थी और दूसरे में प्याला। यह लोग उसी सड़क पर तलवार भाज रहे थे। भीड़ चारों ओर से घेरे हुए थी।

यह लोग तलवार भाजने की अच्छी कला जानते हैं। किन्तु अच्छा होता कि यह लोग तलवार छोड़कर मशीनगन चलाते या बम फेंकते, क्योंकि अब समय बदल गया है और पुराने हथियार किसी काम के नहीं रहे। जैसे भारतीयों ने चाय, काफी, टोस्ट, सूट इत्यादि को अपनाकर अर्वाचीनता को ग्रहण किया, उसी प्रकार उन्हें अपने त्यौहारों में लकीर का फकीर नहीं बनना चाहिए।

आज की लीला तलवारों का खेल थी। अच्छा तो अवश्य था, किन्तु बड़ा पुराना। सरकार ने, मैं समझता हूं, इसलिए इसे बन्द कर देने की आज्ञा नहीं दी। वह जानती है कि तलवार चलाना भारतवासी कितना भी सीख लें, बन्दूक और मशीनगन के आगे नहीं ठहर सकते, इसलिए इसमें किसी प्रकार का भय नहीं है।

एक दिन मैं और लीला देखने गया। आज के ही दिन लंका का सम्राट् अयोध्या के सम्राट् द्वारा मारा गया। देखा कि कागज की एक विशाल मूर्ति बनी है और उसके भीतर एक आदमी घुसा हुआ है। वही उसे संचालित करता है। आज की लीला सन्ध्या को ही समाप्त हो गई और लीला देखनेवालों में बड़ा उल्लास दिखाई पड़ा। मैंने सुना, अभी कई दिन और यह सब चलेगा, किन्तु मैं फिर नहीं गया।

मैं सोचने लगा कि सचमुच यह धार्मिक कृत्य है या सैनिक मनोवृत्ति जाग्रत् करने का बहाना हिन्दुओं ने बना रखा है। यदि ऐसी बात है, तब तो भारत में ब्रिटिश शासन के लिए खतरे की बात है। यद्यपि सेना में भरती होने के पहले मैं भारत को स्वतन्त्रता दे देने का पक्षपाती था। यहां आने पर भी मेरा यही विचार था, किन्तु अब यह विचार डांवाडोल हो रहा है, कभी कुछ निश्चय नहीं कर पाता हूं। यहां की नौकरी, नौकरी नहीं है। हम लोग नौकर हैं, किन्तु सभी भारतवासी हमें देवता के समान समझते हैं। ऐसी नौकरी हमें कहां मिलेगी! यहां के ऐसा शिकार का साधन कहां मिल सकता है? यहां तो मनुष्य का भी शिकार कर लो, तो कोई बोलनेवाला नहीं है। खाने-पीने की सुविधा। इन सब बातों को जब सोचता हूं तब और मन करता है। इनका इतिहास और संस्कृति जब देखता हूं, तब मन कुछ और ही कहता है। मैं इसपर विचार करके कुछ निश्चय करूंगा।

वैद्यजी

इधर तो कई महीने से मैं बड़े संयम से रहने लगा हूं। केवल दो बोतल व्हिस्की अब प्रतिदिन पीता हूं। सवेरे चाय के साथ अण्डे भी केवल चार ही खाता हूं। इसी प्रकार और भी भोजन में कमी कर दी है। फिर भी मुझे मलेरिया हो ही गया। भारतवर्ष का सबसे बड़ा शस्त्र मलेरिया है। सुनता हूं, यहां क्षय रोग भी बहुत होता है। मेरी राय में तो मलेरिया तथा क्षय की सेना इतनी बली है कि भारतवासियों को किसी बैरी से लड़ने के लिए और किसी अस्त्र-शस्त्र की आवश्यकता ही नहीं है। इसीके द्वारा सबपर विजयी हो सकते हैं।

बीस दिन मैं सैनिक अस्पताल में पड़ा रहा। खूब कुनैन खाई। अब ज्वर तो नहीं आता, किन्तु दुर्बलता वैसी ही बनी हुई है। कई दवा-

इया खाई, किन्तु शरीर मे जो स्वास्थ्य की पहले उमग थी, वह कहा चली गई, पता नही। काम मे जी नही लगता। छ महीने की छुट्टी की मर्जी मैंने दी है। मेडिकल बोर्ड जाच करनेवाला है। यदि छुट्टी मिल गई तो मैं इंगलैण्ड जाकर अपना स्वास्थ्य ठीक करूगा।

मैं सब तैयारी कर रहा था। एक दिन मेरे मित्र पण्डितजी आए। उन्होंने काशी या कलकत्ते जाकर किसी वैद्य को दिखाने के लिए कहा। वैद्य लोग देशी डाक्टर होते हैं। वह किसी कालेज मे नही पढ़ते। आज से सात-आठ सौ साल पहले कुछ पुस्तकें लिखी गई हैं, उन्हीको पढ़कर वह चिकित्सा करते हैं। मुझे पण्डितजी की बातें उपन्यास-सी लगीं। किन्तु उन्होने बडी गम्भीरता से हमे बताया।

मैंने कहा कि दवा तो उनकी नही कर सकता, किन्तु कुछ भारत के सम्बन्ध मे जानकारी ही बढ़ेगी, इस विचार से काशी ही जाने का निश्चय किया। कलकत्ता दूर भी था, और केवल इतनी-सी बात के लिए मैं इतना व्यय करना बेकार समझता था।

पण्डितजी ने जिसका पता बताया था वह मैंने गाइड को बताया। सुना कि वह काशी के बड़े विख्यात चिकित्सक हैं। गाइड के साथ चला। सड़क पर टैक्सी छोड़कर गली मे जाना पड़ा। भारत के चिकित्सक लोग ऐसी जगह रहते हैं जहा हवा और प्रकाश भी कठिनाई से पहुच सकें। शायद इसलिए कि उनकी दवाइयां खराब न हो जाएं। राह मे प्रत्येक दूसरे पग पर गोबर तथा कूड़ा मिलता था और रास्ता ऐसा जान पड़ता था कि नवम्बर मास मे उत्तरी ध्रुव की यात्रा कर रहा हू, सूर्य की किरणें वहा आने से डरती थी।

वैद्यजी के घर पर पहुचा। वैद्यजी का घर बहुत बड़ा था। भारतीय ढंग से बना था। बहुत बडी चौकी थी। उसपर गद्दा था। उसपर उजली चांदनी बिछी थी। चांदनी पर मोटे-मोटे तकिये रखे हुए थे। उसीके सहारे वैद्यजी बैठे थे। वैद्यजी के बाल जर्मन जाप की भांति कटे थे। बडी मूछें थीं। चौकी के सामने कुर्सियां रखी थीं। एक ओर एक आदमी सामने आंगन मे बैठा एक बड़े से खल मे कुछ घास, कुछ पत्तियां और कुछ लकड़ी के टुकड़े बड़े जोरो से कूट रहा था, जिसके

प्रारम्भ की। देखिए क्या परिणाम होता है। शराब और अण्डा वैद्य-जी ने बन्द कर दिया।

जादूगर गांधी

मेरे जीवन में आज एक विचित्र घटना घटी, जिसने मेरे मन और विचार में ज्वार-भाटा उत्पन्न कर दिया। मैं चाय पी रहा था। नौकर ने अखबार लाकर रख दिया। मैं समाचारपत्रों के पढ़ने में विशेष समय नहीं बरबाद करता। समाचारपत्र तो महाजनों तथा सेठ-साहूकारों के लिए है, जिन्हें कोई काम नहीं है। भोजनोपरांत तकिये के सहारे लेट गए और आदि से अंत तक बिना मतलब की बातें पढ़ रहे हैं। लोग समझते हैं कि सरकार के कार्यों की आलोचना निकलती है और सरकार के मत के अनुसार वह नहीं चलते, उनके मत के अनुसार सरकार चलती है। जैसा चाहते हैं, सरकार से करा लेते हैं, उनके विरोध में सरकार जा नहीं सकती। हम लोग तो अखबार इसलिए देखते हैं कि किसके यहां आज विवाह-विच्छेद हुआ और किससे किसका विवाह लगा। जब से भारत में आया हूं, मैं केवल दो बातें समाचारपत्रों में देखता हूं। एक तो फुटबाल तथा हाकी के खेलों के सम्बन्ध में बड़ी उत्सुकता रहती है, दूसरे अपने देश की घुड़दौड़ के सम्बन्ध में जानने की इच्छा रहती है।

इन्हीं बातों को देखने के लिए मैंने 'सिविल ऐण्ड मिलिटरी गज़ट' उठाया। यकायक बड़े मोटे-मोटे अक्षरों में यह पढ़ा कि अंग्रेज़ी राज्य के प्रति बड़ा भारी षड्यन्त्र। योंही मैं उन लेखों को पढ़ने लगा। ऐसे तो कभी लेख इत्यादि मैं पढ़ता नहीं। उसमें लिखा था कि मिस्टर गांधी ने अंग्रेज़ी सरकार से असहयोग करने का विचार किया है। यही समझ में नहीं आया कि असहयोग कैसे किया जा सकता है। लेख मैंने और

आगे पढ़ा।

समाचार में बताया था कि मिस्टर गांधी सरकार के किसी का-
का समर्थन नहीं करेंगे। सरकारी कानून का विरोध करेंगे।
और कहते हैं कि हम किसी प्रकार के हथियार का प्रयोग नहीं करेंगे।
सरकार को इनके मुकाबले के लिए तैयार रहना चाहिए।

समाचार में यह भी बताया था कि अंग्रेजों के लिए यह संकट का
समय है। ऐसा में और बुद्धि कानी चाहिए और जितने नेता हैं, उन्हें
भारत से बाहर किसी टापू में भेज देना चाहिए।

मैंने मिस्टर गांधी का नाम पहले भी सुना था। उनके सम्बन्ध में
तीन-चार बार पढ़ा भी था। एक बार तो एक अंग्रेजी पत्र में उनकी
जीवनी निकली थी, जिसमें लिखा था कि यह कोई फकीर जादूगर हैं।
इनके हाथ में एक लाठी रहती है, जिसमें एक प्रकार का जादू रहता है।
जो इनके सामने आता है, उसे इस लाठी से यह छू देते हैं और वह
सब बातें भूल जाता है और उसका दिमाग खराब हो जाता है। फिर
जो यह कहते हैं, वही करने लगता है। यह कुछ खाते नहीं। एक
बकरी पास रखी है। उसे लाठी से छू देते हैं और जितना दूध चाहें
उससे पी लेते हैं। यह भी लिखा था, जादू सीखने से पहले यह इंगलैंड
भी गए थे और वहां कानून पढ़ा था। कोई अंग्रेज इनसे मिलने नहीं
जाता। यदि कोई जाए तो वह इसी लाठी से छूकर उसे चेला बना
देते हैं। वह फिर लौटता नहीं, एक गुफा में उन्हीं के साथ रहने लगता
है।

दूसरी बार मैंने पढ़ा था कि वह बड़े भारी क्रांतिकारी हैं। छिपे-
छिपे इन्होंने हजारों बम और लाखों मन बारूद एकत्र किया है। भारत
सरकार से यह लड़ाई की तैयारी कर रहे हैं।

फिर मैंने इनके विषय में कभी ध्यान नहीं दिया था। आज के लेख
में मैंने यह पढ़ा कि यह सरकार का विरोध करने के लिए एक योजना
तैयार कर रहे हैं और कहते हैं कि हमारी ओर से किसी प्रकार की हिंसा
नहीं होनी चाहिए और यदि हमारे ऊपर हिंसा हो तो सह लेनी चाहिए।
मैंने तो पहले समझा था कि यह रॉबिनहुड के समान कोई डाकू होंगे।

किन्तु इसमें कुछ चाल अवश्य है, जब वह कहते हैं कि हम हिंसा नहीं करेंगे। शायद हम लोगों को धोखे में डालना चाहते हैं कि हम लोग अचेत रहें और हम लोगों पर हमला कर दिया जाए। किन्तु हम लोग इतने मूर्ख नहीं हैं। हम लोगों ने बड़े-बड़े साम्राज्य बनाए हैं। सब समझते हैं। हम लोगों को कोई धोखा नहीं दे सकता।

हमारे मन में विचार की तरंगें उठने लगीं। देखिए हम लोगों ने भारत का कितना भला किया है। केवल तीन-तीन पैसे में सारे भारत में चिट्ठियां भिजवा देते हैं, रेल चलाई है, पानी का कल लगवा दिया है, सेफ्टीरेजर प्रयोग करना सिखाया है, बांस की कलम के स्थान पर फाउन्टेन पेन का इस्तेमाल बताया, पावरोटी कैसे खाई जाती है बताया। फिर भी धन्यवाद देने के स्थान पर हमारा विरोध। मनुष्य में कितना स्वार्थ भरा है! हम लोगों का त्याग अद्भुत है। देखिए हम इगलैण्ड में धोती बनाते हैं, किसके लिए? इगलैण्ड में कौन धोती पहनता है! केवल भारतीयों के लिए। फेल्ट की टोपी बनवाते हैं केवल इनके लिए। ओह, यह लोग अपना लाभ नहीं समझते। चाहते हैं कि हम लोग यहां से चले जाएं।

सुना है कि इन्होंने कोई टोपी आविष्कार की है। वह टोपी लगा लेने से सिर पर लाठी की चोट नहीं लगती। कहीं बहुत-से लोग ऐसी ही टोपी लगाए सभा कर रहे थे। उनपर लाठी चलाई गई तो उन्हें कुछ पता ही नहीं चला। वह हटे नहीं। इस टोपी का क्या रहस्य है, किसी वैज्ञानिक को पता लगाना चाहिए। ब्रिटिश सेना ऐसी टोपी क्यों न धारण करे, युद्ध में काम देगी।

यही सब बातें मैं सोचने लगा। सोचते-सोचते मैंने दो बातें निश्चय कीं। एक तो यह कि इन्हें किसी प्रकार देखना चाहिए। दूसरी यह कि इतना विरोध तो बड़ी सरलता से मिट सकता है। मैं इसका उपाय बताता हूं।

सी॰ सी॰ एस॰ आई॰

कुछ पेंशन भी देनी चाहिए।

पता [illegible]

बहुत बड़ा अपराध है क्योकि इसका उलटा अर्थ यह होगा कि ब्रिटेन हार जाए ।

मैंने महात्मा या मिस्टर गाधी के सम्बन्ध मे कई पुस्तकें पढ डालीं। कुछ तो भारतीय विद्वानों की लिखी थीं, कुछ यूरोपियन लोगों की।

इन पुस्तको मे दो विचित्र बातें देखने मे आईं। एक तो यह कि इनका भोजन ६ पैसे प्रतिदिन में होता है। ६ पैसे बराबर होते हैं डेढ़ पेनी के। इसीमे अल्पपान, चाय, लच और डिनर सब। फिर भी लोग कहते हैं कि भारतवासियो की आमदनी कम है। जिस देश में डेढ़ डेढ़ पेनी मे दिन-भर का सब भोजन हो जाए, वह देश बहुत बड़ा धनी होगा। यो तो भारतवर्ष धनी देश है, यह हम भी मानते हैं; क्योकि यहां सरकारी कर्मचारियों को वेतन बहुत अधिक दिया जाता है। यहा जितना प्रातीय गवर्नरों को वेतन दिया जाता है उतना ब्रिटेन के प्रधान मन्त्री को भी नहीं, और गवर्नर जनरल का तो उनके दूने से भी अधिक है। यह तो धनी देश ही कर सकता है। फिर भी मुझे यह ध्यान न था कि यह इतना धनी होगा और यहा सब वस्तुए इतनी सस्ती होंगी।

दूसरी बात जो मैंने पढी वह यह कि यह दिन-भर चर्खा चलाया करते हैं और जो जाता है उससे कहते हैं कि चर्खा चलाओ। इसमें कुछ न कुछ रहस्य अवश्य है। यह शिकायत है कि महात्मा गाधी कहते हैं कि हम चर्खे द्वारा भारत को स्वतन्त्र कर लेंगे। इसका रहस्य क्या है? यह देश पुराने लोगों के जादुओ से भरा है। हो न हो, इसमें कोई जादू हो। चर्खे से स्वराज्य का अर्थ कुछ और हो ही नहीं सकता।

या तो यह इसलिए है कि अग्रेज लोग समझें कि यह तो केवल चर्खा चल रहा है और धीरे-धीरे चुपके-चुपके गोला-बारूद की तैयारी होती है। या चर्खे में किसी प्रकार का यन्त्र हो। क्योकि अब आकाश में रस्सी फेंककर यहां के जादूगर चढ़ सकते हैं और बिना सांस लिए घण्टों बैठ सकते हैं और आग पर चल सकते हैं, बिना जूता पहने! तब इन लोगों के लिए सब संभव है। मैं तो अपने देशवासियों को चेतावनी देता हू कि चर्खे में कोई न कोई रहस्य अवश्य है। सी०आई० डी० विभाग को अपने अन्तर्गत एक विशेष विभाग खोलकर इसीकी

खोज में लग जाना चाहिए। मैं सर ओलिवर लाज, डाक्टर रामन प्रोफेसर हक्सले तथा रायल सोसाइटी के सब सदस्यों से निवेदन करता कि सब काम छोड़कर इसीकी ओर ध्यान दें और बताएं कि क्या बात है, क्योंकि एक साम्राज्य के जीवन-मरण का प्रश्न है।

यदि इन लोगों की खोज से कुछ भी सन्देह चर्खे के सम्बन्ध में प्रगट हो और यह पता चले कि चर्खा वास्तव में देखने में साधारण-सी वस्तु है, किन्तु सचमुच भयानक अस्त्र है तो भारत सरकार को ऐसा कोई विधान बनाना चाहिए कि जो चर्खा चलाएगा और जो दूकानदार चर्खा बेचेगा, उसे काले पानी की सजा दी जाए और जो बढ़ई चर्खा बनाए उसका हाथ काट लिया जाए।

लोग मुझपर हंसेंगे। बात यह है कि यूरोपवाले जड़वादी हो गए हैं, उन्हें इन बातों पर विश्वास होना कठिन है। भारतवाले यन्त्र और मन्त्र का बड़ा प्रयोग करते हैं। सुना है कि भारत में एक पुस्तक है वेद। यहां ऐसी कथा प्रचलित है कि एक बार ईश्वर ने सृष्टि के काम से छुट्टी ली। बहुत थक गए थे। छुट्टी में उनका मन नहीं लगा। बस उन्होंने एक पुस्तक लिख डाली। वह पुस्तक लिए हवाई जहाज पर कहीं जा रहे थे कि पामीर के पठार पर वह पुस्तक गिर पड़ी। वहां एक आदमी के हाथ वह पुस्तक लगी, वह लेकर पंजाब चला गया।

वह पुस्तक गिरी तो 'वद' से आवाज हुई, इसीसे 'वद' माने यहां संस्कृत भाषा में कहना या बोलना हुआ। और वह पुस्तक सब बातें कहती है, बताती है, इससे इसका नाम वेद हो गया। और जो सज्जन लाए, उनके नाम का पता नहीं लगता। पुराना एक खपड़ा मिला है उसपर उनका हस्ताक्षर है, केवल 'आर० एन०'। इसीसे उनके वंशज अपने को आर्यन कहने लगे। यह सब कथा यहां हमें एक पण्डितजी से ज्ञात हुई, जो महामहोपाध्याय हैं, अर्थात् भारत सरकार ने जिसे विद्वान मान लिया है।

हां, तो कहा जाता है कि उक्त पुस्तक में संसार की सब विद्याएं, जिनके बारे में लोग पता लगा चुके हैं या जो लगाएंगे, लिखी हुई हैं। इसी पुस्तक की एक प्रति यहां से एक जर्मन उठा ले गया। वहां एक

समिति बनी और उसका अध्ययन आरम्भ हुआ। उसमे हवाई जहाज के सब पुर्जों का नाम मिला। फिर क्या था, पुस्तक को देख-देख हवाई जहाज जर्मनों ने बना लिया।

सम्भव है, चर्खा भी इसी प्रकार का यन्त्र हो। अभी उसकी विशेषता हम लोगों पर प्रकट नही हुई है। महात्मा गाधी ने सब जान लिया हो, कौन जाने, इसलिए उनसे सतर्क हो जाना ही बुद्धिमानी है।

इन सब विचारो ने तथा बातो ने महात्मा गाधी को देखने की अभिलाषा और तीव्र कर दी। सोचा कि छुट्टी लेकर उनके पास चला जाऊं, अपनी आखो से देखू कि उनके सम्बन्ध मे जो लिखा या कहा जाता है, ठीक है या गप। परन्तु यह भी सुना कि उनके पास सी० आई० डी० तथा समाचारपत्रों के प्रतिनिधि चौबीसो घण्टे बैठे रहते हैं। इसलिए दूसरे ही दिन सब जगह मेरे जाने का पता लग जाएगा। वह मेरे लिए ठीक न होगा। इन्ही विचारो मे मैं था कि एकायक पत्र में पढ़ा कि महात्मा गाधी कानपुर आ रहे हैं। यह तो मनमागी मुराद मिली। कुआ स्वय प्यासे के पास आ गया।

महात्माजी आए

मेरे मन में महात्माजी को देखने की उत्कट अभिलाषा होने लगी। जितना भी मैं उनके सम्बन्ध मे पढ़ता था, उतना ही मेरे मन में विचित्र भाव उत्पन्न होने लगते थे। क्या कारण है कि इतना अधिक वेतन पानेवाले वायसराय के प्रति लोगो की इतनी श्रद्धा नहीं है, बड़े-बड़े राजाओं, महाराजाओ के प्रति, जिनकी शान शौकत [illegible]

है।

चित्र तो मैंने देखा था। [illegible]

विश्वास नहीं। [illegible] सूद, [illegible]

का बहिष्कार करती, न बदलवाती अपना शरीर। फिर इन सब में ऐ
जान पड़ता है जो पुरानी पुस्तकों में पढ़ा है वह या तो कोई देवी
या जादूगर जिसने जादू इत्यादि सिद्ध किया है।

इन्हीं दिनों में मैं जान गया था कि एक दिन 'सिविल एंड
मिलिटरी गजट' में पढ़ा कि गांधी कानपुर जा रहे हैं। उनके इस
थी कि कानपुर में गांधी का आना बहुत ही खतरनाक है। क
फ़ुनियों का शहर ठहरा, यदि वहाँ भी वहाँ गए और गोलियों के
में आ गए तो कानपुर अंग्रेजों के हाथों से निकल जाएगा। कलकत्ते
शहर में भी दशा भयंकर खतरनाक हो गई थी। ऐसी अवस्था में उनका
यहाँ आना रोक देना उचित ज्ञात होगा।

मैंने भी पढ़ा तो सच मालूम पड़ने लगा। मैं सोचने लगा कि
अहिंसा-अहिंसा तो यह कहते हैं किन्तु जान पड़ता है छिपे-छिपे यह
कोई अस्त्र-शस्त्र प्रयोग रखते होंगे। गांधी और चेले तो इनके साथ
बहुत रहते हैं। कांग्रेसी लोग सेना की भांति होंगे और कुर्ते के भीतर
पिस्तौल छिपाकर रखते होंगे कि जब जहां आवश्यकता पड़े इस्तेमाल कर
दिया जाए।

सरकार की ओर से उनका आना रोकने के लिए कोई आज्ञा नहीं
निकली। आने की तिथि निकट होने लगी। अब मैं सोचने लगा कि
जब ऐसे भयंकर व्यक्ति हैं तब सरकार ने उनका आना क्यों नहीं रोक
दिया और 'सिविल एंड मिलिटरी गजट' ऐसे पत्र ने सलाह दी, उसकी
सलाह भी नहीं मानी गई। यह और भी विचित्रता थी। ऐसे ही पत्रों
की राय पर चलने के कारण भारत में अंग्रेजों की सत्ता है। परन्तु सबसे
प्रबल बात जो हृदय में मेरे थी, वह यह कि किसी प्रकार से भी उन्हें
देखूं।

मैंने सोचा कि आने की गाड़ी का पता लगाकर स्टेशन पहुंच जाऊंगा
और किसी न किसी प्रकार से देख लूंगा। किन्तु बाज़ार में सुना कि वह
दो स्टेशन पहले ही उतर जाते हैं। इसपर बाज़ार में विवाद भी हुआ कि
कारण क्या है? एक आदमी ने बताया कि यह लाट साहब की नक़ल है।
लाट साहब की गाड़ी जब चलती है तब यह नहीं बताया जाता कि वह

किस गाड़ी से जाएंगे और किस समय उतरेंगे। गांधीजी भी तो उन्हींके मुकाबले के हैं। वह इतना तो कर नहीं सकते क्योंकि रेल पर उनका अधिकार नहीं है, इसलिए वह इतना ही करते हैं कि वह नहीं बताते कि हम कहां उतरेंगे।

दो दिन आने की तिथि के पहले हम लोगों को सरकार की ओर से सूचना मिली कि हम लोगों को सशस्त्र मशीन गन के साथ तैयार रहना होगा। मैं सोचता था वही बात हुई। गांधीजी के साथ अवश्य छिपे सशस्त्र सेना रहती होगी। नहीं तो हम लोगों को मशीनगन के साथ तैयार रहने की क्या आवश्यकता थी। जहां उनका व्याख्यान होनेवाला था उसीके पास एक सेठ का घर था। उसीके भीतर चालीस सैनिकों को रहने की आज्ञा दी गई और कहा गया कि यह न प्रकट हो कि यहां किसी प्रकार का सैनिक अड्डा है।

जो भी हो, मुझे देखने का अवसर मिल गया। हम लोग सवेरे वहां उसी घर में जाकर जम गए। भोजन का प्रबन्ध होटल से था। जिसका व्यय सेठ ने अपनी ओर से किया था। सेठ ने मुझसे कहा कि आप यह एक पत्र मुझे लिख दें तो मेरा बड़ा उपकार हो कि सेठ ने हम लोगों की बड़ी खातिर की। मैंने पूछा कि इससे तुम्हें क्या लाभ होगा ? कुछ रूई की बिक्री बढ़ जाएगी ? उसने कहा कि नहीं मैं कलक्टर साहब को दिखाऊंगा तो मुझको कोई टाइटिल मिल जाएगी। मुझे बड़ी हंसी आई। मैंने कहा—'अच्छा।'

तब संकोच के साथ कहने लगा कि एकाध वाक्य यह भी लिख दीजिएगा कि गांधी की बड़ी बुराई करता था। इससे मेरा काम बन जाएगा। मैंने कहा कि तुम सचमुच बुराई करते हो तो आज भी सभा में जाकर करो। या जाकर कलक्टर साहब से करो। मैं यह नहीं लिख सकता।

छः बजे से सभा का समय था। तीन बजे से लोग मैदान में जमा होने लगे। बूढ़े, जवान, स्त्री, लड़के सभी एकत्र थे। अंग्रेजों को छोड़कर सभी जातियां जान पड़ीं। मुसलमान कम थे। कम से कम तुरकी टोपी लगानेवाले। मैं ऊपर से देख रहा था। दूरबीन भी लगा ली

थी। छः बजते-बजते तो धरती दिखाई ही नहीं देती थी। ठीक छः गांधीजी मोटर पर वहां पहुंचे। उनके साथ और भी कई मो थी।

आते ही बड़े जोर से 'महात्मा गांधी की जय' का नारा लगा यह इतने जोर का था कि हम लोगों ने समझा कि यह आक्रमण का संकेत न हो और सैनिकों को तैयार होने की आज्ञा देने ही वाले थे किन्तु कुछ हुआ नहीं। गांधी महाशय गाड़ी से उतरे। देखा कि लोग उन्हीं की ओर धसकने की चेष्टा कर रहे हैं। फिर यह भी दिखाई पड़ा कि लोग उनके पांव की ओर हाथ कर रहे हैं। यदि वह मोटर से न आए होते तो यह जान पड़ता कि उनके पांव में कांटा धंस गया है; उसीको निकालने की चेष्टा लोग कर रहे हैं।

महात्मा गांधी की परीक्षा लेने का प्रबन्ध था। जो मंच बना था वहां तक जाने के लिए कोई राह नहीं बनाई गई थी। देखना था कि जो भारत को स्वतंत्र करना चाहता है, वह इतना जनसमूह चीरकर जा सकता है कि नहीं।

फिर देखा कि अनेक लोगों ने उनके चारों ओर एक घेरा बना लिया और भीड़ के सागर को पार करने लगे। लोगों को यह सुनकर आश्चर्य होगा कि महात्मा गांधी पद्रह मिनट में मंच पर पहुंच गए। जितने लोग अभी तक बैठे थे, खड़े हो गए और सब लोगों में हलचल हो गई। इस हलचल में कितने लोग जो आगे थे पीछे हो गए और पीछेवालों ने अपनी कुहनियों और कंधों के बल से आगे के लिए राह बना ली। किन्तु कोई वहां से टला नहीं। जिन महिलाओं की गोद में शिशु थे, उन्होंने अपने रुदन से महात्मा जी का स्वागत किया क्योंकि वे बोल नहीं सकते थे। जितने लोग वहां उपस्थित थे, सब लोग कुछ न कुछ कह रहे थे। इसलिए शोर इतना हो रहा था जितना फ्रांस की क्रांति के समय।

विद्यागार होने पर भी भारतवर्ष में आज भी शास्त्रों का
है। मैंने पण्डितजी से कहा कि भारतवर्ष की कभी
मिल सकता। जब बिजली आ गई तब मरनों का तेल
पतलून का आविष्कार हो गया तब धोती पहनना, कुर्सी
मर्गी तब जमीन पर बैठना कौन-सी अच्छी बात है? पण्डितजी ने
'हम लोग तो वही करते हैं जो शास्त्रों में लिखा है।' मैंने पूछा—
बहुत दिन पहले बने होंगे?' पण्डितजी ने कहा—'
कहां। वे तो ईश्वरीय बातें हैं। ऋषियों ने उन्हें लिखा है।
ऐसे हैं जैसे सूर्य। सदा एक-से रहते हैं। यह सब समय के
ऋषी लोग ऐसी-वैसी चीज नहीं लिखते थे। वह जो लिख
पचास हजार साल पहले जितना ठीक था उतना ही आज भी
है और उतना ही दो लाख साल आगे भी रहेगा। देखिए, ऋषि
बनाया है—दो और दो-चार होते हैं। डेढ़ लाख साल भी दो
पांच नहीं हो सकते। वह लोग योगी होते थे जो आगे और पीछे
देख लेते थे।' मैंने कहा कि मुझे किसी योगी के पास ले चलिए।
आज तो मैं दिवाली देखना चाहता हूं। कार मंगवाऊं? पण्डितजी
ने कहा कि दिवाली देखनी हो तो पैदल ही ठीक होगा। मैं अभी
जाता हूं। सन्ध्या समय आ जाऊंगा।

मैंने कैप्टन मांसहेड को भी बुला लिया। पण्डितजी के साथ
और कैप्टन चले। नगर में जाकर हम लोगों ने देखा। छोटे-छोटे
मकान की छतों पर, दीवारों पर, तारों के समान जल रहे थे। सा
नगर प्रकाश से जगमगा रहा था। बड़ी कोठियों में मैंने देखा कि बिज
के सैकड़ों बल्ब जल रहे हैं। मैंने पण्डितजी से पूछा कि शास्त्रों में बिज
के बल्ब का विधान तो होगा ही। पण्डितजी ने बताया कि शास्त्रों
बिजली पैदा करनेवाले इन्द्र का वर्णन है। शास्त्र आरम्भ से चले
हैं। बिजली का वर्णन वेदों में न होता तो बिजली आती कहां से
एक जर्मन, जो यहां कलक्टर था, वेद चुराकर ले गया। वहीं उसने
बिजली बनाई।

हम लोग आज क्लब नहीं गए। नगर की रोशनी देखी। अच्छी

रूमाल के समान बिछा था। उसीके चारों ओर लोग बैठे थे। हम लोग जब पहुंचे तब वहां शायद लोग कुछ गिन रहे थे, क्योंकि 'चार, छ, आठ की आवाज मेरे कानों में आई।

हम लोगों को देखकर वह लोग कुछ आश्चर्य में हो गए। पण्डितजी ने तुरन्त सेठजी से हमारा परिचय कराया। सेठजी ने फिर हमसे परिचय कराया। यह सेठ लदाऊदास हैं, आप ग्यारह मिलों के डाइरेक्टर हैं और आपकी गोबर से कंडे बनाने की मिल बन रही है; यह रायसाहब हनुमनदास हैं; आप यहां डिप्टी कलक्टर हैं; यह मुंशी चलतेलाल वकील हैं। बार एसोसिएशन के सभापति हैं। आप पण्डित प्रस्ताव प्रसाद पांडेय एम० एल० ए० हैं। और जो लोग थे वह साधारण रहे होंगे क्योंकि उनसे मेरा परिचय नहीं कराया गया। दुनिया में कुछ लोग ऐसे हैं जो जुआ को अनुचित समझते हैं। यहां वह देखते तो समझते कि ऐसे-ऐसे ऊंचे लोग जो काम करते हैं वह काम भला अनुचित हो सकता है। मुझसे कहा कि खेलिए। मैंने कहा कि मुझे तो आता नहीं। खेलने में कोई बात नहीं है। जरा देखूगा। फिर खेल आरम्भ हुआ। एक सज्जन ने पहले छोटी-छोटी कौड़िया दाहिने हाथ में ली और फिर हाथ को पांच मिनट तक ऐसे हिलाया जैसे मिरगी आने पर लोगों का हाथ हिलता है और कौडियों को हाथ से गिरा दिया और कहने लगे—'चार-चार', डिप्टी साहब कहने लगे—'नौ-नौ'। पता नहीं इसके पश्चात् किस प्रकार कौड़ियां गिनीं। सबके सामने दस-दस रुपये के नोट रखे थे। एक आदमी ने सबके सामने से नोट बटोर लिए और स्वयं कौड़ियां हिलाने लगा। बड़ी देर तक इसी प्रकार से होता रहा। कभी एक आदमी नोट बटोरता, कभी दूसरा। और दोनों हाथ फैला ऐसे बटोरता था जैसे किसीको कोई अंक में ले रहा हो।

यह हो ही रहा था कि धमधमाते हुए एक साहब पुलिस की वर्दी पहने दो कास्टेबलों के साथ पहुंचे। सेठ साहब ने तुरत खड़े होकर कहा—'आइए कोतवाल साहब, तशरीफ रखिए।' कोतवाल साहब ऐसे प्रसन्न दिखाई दिए मानो जुए में नहा गए हैं, किसी दल में गए हैं। दस मिनट बैठने और मिठाइयां खाने के पश्चात् सेठजी ने सौ-सौ

रुपये के दो नोट कोतवाल साहब के हाथों में दिए। बोले—'लड़को को मिठाई खिलाइएगा।' कोतवाल साहब ने जेब में रुपये रखते हुए कहा—'इसकी क्या आवश्यकता है।' फिर बोले—'अच्छा चन्नू, मुझे अभी कई जगह जाना है।'

लन्दन को वापस

आज मुझे तीन बजे जहाज पर सवार होकर लंदन लौट जाना है। दो साल की छुट्टी मिल गई। सब सामान ठीक है। आज आखिरी बार पापड़ खा रहा हूं। दो साल के बाद क्या होता है कौन जाने। दो साल मैं भारत में रहा। इतने मे चार बार मलेरिया हुआ, ग्यारह बार अधकपारी हुई, सैंतीस बार जुकाम हुआ। यहां की फसल, अण्डे और दूध देखकर तो यही लालच होता है कि यहीं बस जाऊं; किन्तु स्वास्थ्य के लिए क्या किया जाए? वैज्ञानिक लोग कुछ ऐसी व्यवस्था नहीं करते जिससे अंग्रेज लोग भारत में बस सकें।

इंगलैण्ड लौटने पर मुझे अवकाश तो कम मिलेगा। वहां इस बात पर पार्लियामेंट में जोर दिलाना है कि सरकारी नौकरियां अधिकांश मुसलमानों को मिलनी चाहिए। बैरा से लेकर मिनिस्टर तक और एक्केवान से लेकर कप्तान तक यह सफलता से काम कर सकते हैं। हिन्दू नौकर तो हमारे गिलास साफ करने मे आनाकानी करता है। मुसलमान लोग बात भी बड़ी मधुर करते हैं, तबीयत खुश हो जाती है।

दूसरी बात जो वहां मुझे यह प्रचार करना है कि सेना इस देश में कम है। भारतीय सेना पर कुछ विश्वास नहीं करना चाहिए। अंग्रेजी सेना पर्याप्त संख्या मे यहां होनी चाहिए। प्रत्येक सोल्जर को ढाई सौ रुपया और भोजन देने की व्यवस्था हो जाए तो वह अपना देश छोड़कर आ सकेंगे। भारत में रुपया मिलना कुछ कठिन नहीं है। सोने की

खान अफ्रीका और आस्ट्रेलिया में है, किंतु भारत का घर-घर है, जहां सुवर्ण का खदान सदा है। यहां लोग दूसरों की हुकूमत से होते हैं। जब मैं यहां आया तब मैंने यहां की अवस्था देखकर यह वि किया था कि यहां के लोगों पर ब्रिटिश शासन करना जबरदस्ती दूसरों पर शासन क्यों किया जाए। किन्तु यहां का इतिहास पढ़ने ज्ञात हुआ कि इस देश पर सदा से दूसरे शासन करते आए हैं। यहां लोग नगे पेड़ के खोखलो में रहते थे। एक प्रकार की भाषा बोलते जिसका नाम 'सैंसक्रूट' बाद में पड़ा। यह दो शब्दों से मिलकर बना है 'सैंस' फ्रेंच शब्द है जिसका अर्थ है बिना, बगैर और 'क्रूट' शब्द बिग बिगड़कर बना है जिसका अर्थ है शक्ति, जोर। यह ऐसी भाषा जिसमें कुछ जोर नहीं था। आयरलैंड से पैट्रिक एन्जेल जिसे छोटे 'पैट एन्जेल' कहते थे यहां आया और उसने इस भाषा को ठीक किया और उसका व्याकरण भी ठीक किया। उसी आयरलैंड से आइरिन जाति ने भारतवर्ष पर आक्रमण किया। इसके पश्चात् अनेक जाति ने इस देश पर आक्रमण करके शासन किया। इसी भांति अंग्रेज भी आए। अंग्रेजों के सामने यहा के लोग ठहर न सके, तुरत उनकी दासता स्वीकार कर ली। अंग्रेजों ने यहां तार, डाक, रेल, सेंट, साबुन, सिगरेट आदि सभ्यता के उपकरण प्रस्तुत किए। मेज पर खाना, खड़े होकर लघुशंका करना, सभ्य कृत्य इन लोगों ने सिखाया। इनसे जो भारतवासी मिलने आए वह भी यही कहते थे कि अंग्रेजी शासक न्यायप्रिय होता है। हिन्दू-हिन्दू का और मुसलमान-मुसलमान का पक्ष लेता है। इन सब कारणों से हम लोगों का यहां रहना आवश्यक है। जब हम लोगों ने इतनी बड़ी जनसंख्या को सभ्य बनाने की प्रतिज्ञा की है तब उसे पूरी करनी ही होगी। नहीं तो संसार के सम्मुख हम क्या मुह दिखाएंगे। युद्ध का भी भय है। दूसरी लड़ाई न जाने कब छिड़ जाए। यहां के लोग सेना में बड़ी आसानी से भरती हो जाते हैं। यहांवाले मैंने देखा भी है और सुना भी है कि लड़ने में बड़े तेज होते हैं। मुसलमान-हिन्दू लड़ते हैं, ब्राह्मण-क्षत्री लड़ते हैं, वैश्य-शूद्र लड़ते हैं। भाई-भाई लड़ते हैं। सुना है, सभा-समितियों में भी लड़ाई ही होती है। सभासद् और मंत्री

का अंत करूं कि सत्य को छिपाऊं, क्यों ऐसा द्वन्द मन में उठ
बाइबिल तो कहती है—सत्य बोलो, किन्तु यह भी सोचता हूं
हजार बरस पहले कही हुई बात क्या मान मानी जाए ? कुछ
नहीं कर पा रहा हूं। रात में सोचूंगा क्या उचित है। बैरा
—'हजूर लाट साहब हों !' यदि ऐसा हो जाता। जहाज का भों
रहा है। कुछ दिनों के लिए भारत भूमि विदा ! सलाम ! ता
होटल सलाम ! बम्बई सलाम !

मुद्रक : इन्द्रप्रस्थ प्रेस (सी०बी०टी०), नई दिल्ली

का अंत करूं कि सत्य को छिपाऊं, क्यों ऐसा द्वन्द मन में उठ र
बाइबिल तो कहती है—सत्य बोलो, किन्तु यह भी सोचता हूं
हजार बरस पहले कही हुई बात क्या आज मानी जाए? कुछ
नहीं कर पा रहा हूं। राह मे सोचूंगा क्या उचित है। बेयरा
—'हुजूर लाट साहब हों!' यदि ऐसा हो जाता। जहाज का भों
रहा है। कुछ दिनो के लिए भारत भूमि विदा! सलाम! त

मुद्रक : इन्द्रप्रस्थ प्रेस (सी०बी०टी०), नई दिल्ली